अरफ़ात किरण

रायबरेली

समाज का रोग

"यदि किसी विभाग में किसी बिरादरी का व्यक्ति पहुंच जाता है तो सारे विभाग को अपनी बिरादरी के लोगों से भर देता है और इसमें किसी योग्यता व अयोग्यता और किसी अधिकार व अनाधिकार का ध्यान नहीं रखता, हमारे समाज का यह वह रोग है, जो इसे घुन की तरह खा रहा है,जिसने सम्पूर्ण व्यवस्था को खोखला व कमज़ोर बना दिया है।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

JAN 17

₹10/-

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

चोरी यह भी है

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०) सहारनपुर से कानपुर जा रहे थे। जब रेल में सवार होने के लिए स्टेशन पहुंचे तो महसूस हुआ कि उनके पास सामान तय लिमिट से ज़्यादा है जो एक यात्री को बुक कराए बिना अपने साथ ले जाने की अनुमति नहीं होती है। इसलिए वे उस खिड़की पर पहुंचे जहां सामान का वज़न करके ज़्यादा सामान का किराया वसूल किया जाता है ताकि सामान बुक करा सकें। खिड़की पर रेलवे का जो कर्मचारी मौजूद था, वह ग़ैर मुस्लिम होने के बावजूद मौलाना को जानता था, और उनकी बड़ी इज़्ज़त करता था। जब मौलाना ने सामान बुक कराने की बात की तो उसने कह दिया, "मौलाना! रहने भी दीजिए, आपसे सामान का क्या किराया वसूल किया जाए? आपको सामान बुक कराने की ज़रूरत नहीं, मैं अभी गार्ड से कह देता हूं, वह आपको ज़्यादा सामान की वजह से कुछ नहीं कहेगा।''

मौलाना ने कहा: "यह गार्ड मेरे साथ कहां तक जाएगा?''

"ग़ाज़ियाबाद तक'', रेलवे कर्मचारी ने जवाब दिया।

"फिर ग़ाज़ियाबाद के बाद क्या होगा?'' मौलाना ने पूछा।

"यह गार्ड दूसरे गार्ड से भी कह देगा।'' उसने कहा,

मौलाना ने पूछा, "वह दूसरा गार्ड कहां तक जाएगा?''

कर्मचारी ने कहा, "वह कानपुर तक आपके साथ जाएगा।''

"फिर कानपुर के बाद क्या होगा?'' मौलाना ने पूछा।

कर्मचारी ने कहा, "कानपुर के बाद क्या होना है? वहां तो आपका सफ़र ख़त्म हो जाएगा।''

मौलाना ने कहा, "नहीं, मेरा सफ़र तो बहुत लम्बा है, कानपुर पर ख़त्म नहीं होगा, इस लम्बे सफ़र की इन्तिहा तो आख़िरत (परलोक) में होगी। यह बताइए कि जब अल्लाह तआला मुझसे पूछेगा कि अपना सामान तुम किराया दिये बिना क्यों और किस तरह ले गए? तो यह गार्ड मेरी क्या मदद कर सकेंगे?''

फिर मौलाना ने उनको समझाया कि यह रेल आपकी या गार्ड की सम्पत्ति नहीं है और जहां तक मुझे मालूम है रेलवे विभाग की ओर से आपको या गार्ड साहब को यह अधिकार नहीं दिया गया कि वे जिस यात्री को चाहें टिकट के बिना या उसके सामान को किराए के बिना रेल में सवार कर दिया करें। अतः यदि मैं आपकी छूट का फ़ायदा उठाकर बिना किराए के सामान ले भी जाऊं तो यह मेरे दीन के लिहाज़ से चोरी में गिना जाएगा और मुझे अल्लाह तआला के सामने अपने इस गुनाह का जवाब देना पड़ेगा और आपकी यह रिआयत मुझे बहुत मंहगी पड़ेगी, अतः कृपा करके मुझसे पूरा-पूरा किराया ले लीजिए।''

मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:०१ जनवरी २०१७ ई० वर्ष:९

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाख़ुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

रगों में वह लहू बाक़ी नहीं है.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सब्र व तक़्वे की मिसाली सूरत.....३
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

तब्लीग़ व दावत–मानवता की मसीहाई.....५
मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी

ख़ैर व बरकत वाला निकाह.....७
मौलाना अब्दुल करीम पारिख (रह०)

तहारत के मराहिल.....९
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

कुरआन का हक़.....११
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्किदा और नवाफ़िल.....१४
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अल्लाह पर ईमान.....१७
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

म्यांमार के मुसलमान–एक पीड़ित समुदाय.....१८
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

ख़ाक व ख़ून का मन्ज़र.....२०
अबुल अब्बास ख़ाँ

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

सम्पादकीय

रगों में वह लहू बाक़ी नहीं है

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

यूरोप व अमरीका और इस्राईल एक त्रिकोण हैं, जिसका सबसे बड़ा उद्देश्य मुसलमानों को कमज़ोर करना और इस्लाम से उनका रिश्ता ख़त्म करना है, जिसके लिए वे हर प्रकार के साधनों का प्रयोग कर रहे हैं। बात कोई नई नहीं है, सलीबी जंगों में हारने के बाद वैचारिक हमलों की बौछार हुई है और हर मुसलमान अज्ञानतावश इसका शिकार हो रहे हैं और विशेषतयः मुसलमान नवजवानों को निशाना बनाया जा रहा है, उनकी क्षमताएं नष्ट करने के प्रयास किये जा रहे हैं, ताकि वे किसी क़ाबिल न रहें और मुस्लिम समुदाय का भविष्य अंधकारमय होता चला जाए। यह बहुत ही अफ़सोस की बात है कि वे अपने सभी साधनों के साथ अपने काम में लगे हुए हैं और उनकी मेहनत लगातार जारी है और हम हर तरह से ख़ाली दामन होने के बावजूद ग़फ़लत का शिकार हैं। मुसलमान नवजवानों की रगों में लगता है कि ख़ून सूख गया है। उनको इस साज़िश का ज़रा भी एहसास नहीं। वे अपनी रंगरलियों में ऐसे मस्त हैं कि उनको ज़रा भी ख़्याल नहीं कि उनकी गाड़ी किस ढलान पर चली गई है और आगे किस चट्टान से टकराने वाली है।

दीन जब आया था तो तंगहाली में था, लेकिन नये ख़ून ने उसमें ऐसी क्षमता पैदा कर दी थी कि दुनिया की बड़ी–बड़ी ताक़तों को झुकना पड़ा। वे हज़रात–ए–सहाबा (सहचर) थे जिनके सामने बड़ी–बड़ी चट्टानें चकनाचूर हो गईं। उनके ईमानी जज़्बे और लगातार कोशिशों ने दुनिया की हालत बदल डाली। वे "रुहबान बिललैल व फ़रसान बिन्नहार" (रात में इबादत करने वाले व दिन में जद्दोजहद करने वाले) के चरितार्थ थे। रातों को अल्लाह के सामने रोने वाले और दिन में लगातार मेहनत करने वाले, दुनिया की कोई ताक़त उनके सामने टिक न सकी और आज हालत यह है कि मुसलमान भिखारियों की भांति कटोरा लिए खड़े हैं कि कोई उसमें रोटी का एक टुकड़ा डाल दे। मुसलमानों को अल्लाह ने लोगों का सहारा बनाया था। उनको देने के लिए पैदा किया गया था। जीवन बिताने की जो व्यवस्था उनके पास थी वह मरे हुए दिलों के लिए भी संजीवनी की भांति थी। नवयुवक स्वयं इससे वंचित हैं। समान रूप से यही स्थिति हर ओर नज़र आती है। हद यह है कि दीनदार लोगों के हल्क़ों (वर्ग) में, मदरसों की चारदीवारी में भी मायूसी का वातावरण नज़र आती है।

उठा मैं मदरसा व ख़ानकाह से नमनाक। न ज़िन्दगी न मुहब्बत न मारिफ़त न निगाह।।

शायर–ए–मश्रिक़ अल्लामा इक़बाल (रह0) ने नवजवानों को जागरुक करने की कोशिश की है:

कभी ऐ नवजवां मुस्लिम तदब्बुर भी किया तू ने। वह क्या गर्दूं था तू जिसका है टूटा हुआ तारा।।

इस्लामी चिन्तक हज़रत मौलाना सैयद अबुल हसन अली नदवी (रह0) ने अपने भाषणों व लेखों में उन नवयुवकों से अपील की है और अपनी किताब "इस्लाम के उत्थान एवं पतन से दुनिया को क्या नुक़सान हुआ" में दिखाया है कि मुसलमानों के पतन से दुनिया ने कहां–कहां ठोकरें खाईं हैं और अब वह तबाही के मुख पर खड़ी है, यदि कोई इसको संभाल सकता है तो वह केवल मुस्लिम समुदाय है।

आज इस समुदाय के नवयुवकों की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी है कि वह वास्तविकताओं पर विचार करे, अपने जीवन को बदलने का प्रयास करे, अपनी ज़िम्मेदारी को महसूस करे और दुनिया को आब–ए–हयात (अमृत) पेश करें जो उनके पास एक धरोहर के रूप में है। दुनिया की यह आवश्यकता यदि पूरी न की गई तो वह मुसलमानों से बदला लेने के लिए कमर कसे हुए है। वह हयात–ए–अबदी (परलोक का न समाप्त होने वाला जीवन) की नेमतों से वंचित है और इस दुनिया का सुकून भी उसको हासिल नहीं। यह सुकून उसको जहां मिल सकता था वे रास्ते मुसलमानों ने बन्द कर रखे हैं और अपना जीवन ऐसा बना लिया है जिसका परिणाम यह है कि इस्लाम की एक बहुत ही भयानक तस्वीर लोगों के सामने है और दुनिया आब–ए–हयात (अमृत) को जहर का प्याला समझ रही है। मुसलमानों की इज़्ज़त का रास्ता यही है कि वे खुद भी उस आब–ए–हयात (अमृत) से फ़ायदा उठाएं, जो उनको उनके नबी से मिला है और दुनिया को भी सुकून व ईमान का वह तोहफ़ा दें जो दुनिया व आख़िरत की नजात का एकमात्र रास्ता है।

सब्र व तक़्वे की मिसाली सूरत

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) के बारह बेटे थे। उनका पूरा ख़ानदान नबियों का ख़ानदान था। उनका वंश हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) से मिलता है। हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) भी अल्लाह के नबी और बुज़ुर्ग बन्दे थे। हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) भी हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) के बेटों में से हैं। हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) के बारे में हदीस शरीफ़ में कहा गया है कि वे शरीफ़ हैं, क्योंकि उनके पिता भी नबी, उनके दादा भी नबी, मानो उनका पूरा घराना ऊपर तक नबी रहा है। इस घराने पर अल्लाह तआला के अत्यधिक उपकार हुए। उनको दुनिया में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त हुआ। इस एहसान का वर्णन कुरआन मजीद में अलग–अलग जगहों पर किया गया है, लेकिन हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) के जो दूसरे बेटे थे उन्होंने अल्लाह के इनाम की क़दर न की और किसी हद तक उनके दिल में धन–दौलत से प्रेम की बीमारी अपनी जगह बना गई थी। घमन्ड व ईर्ष्या उनके स्वभाव में शामिल हो गया। दुनियादार लोगों की तमाम बातें उनमें पाई जाने लगीं।

हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) के दो बेटे यूसुफ़ व बिनियामीन दूसरी बीवी से थे और उसके अलावा सभी बेटे दूसरी बीवी से थे। सभी बेटों में सबसे ख़ूबसूरत व बुद्धिमान हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) थे। इसीलिए सभी बेटों की तुलना में हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) को भी उनसे विशेष लगाव था। हमेशा उनकी चिन्ता करते, किसी भी क्षण अपनी निगाहों से दूर न होने देते। हज़रत युसूफ़ अलैहिस्सलाम पर उनके पिता का असाधारण प्रेम, उनके दूसरे भाइयों के लिए ईर्ष्या का कारण बन गया और उनको यह बात रह–रह कर सताने लगी कि आख़िर हम युसूफ़ से अधिक ताक़तवर व सेवा करने में आगे हो सकते हैं तो हमको यह स्थान क्यों प्राप्त नहीं होता। यही सब बातें उन बेटों ने अपने पिता को समझाना चाहीं, किन्तु हज़रत याकूब (अलैहिस्सलाम) ने उनकी बात की ओर ज़रा भी ध्यान न दिया। अचानक एक दिन उन्होंने यह षडयन्त्र रचा कि किसी बहाने युसूफ़ को यहां से लेकर चला जाए और उनको ग़ायब कर दिया जाए ताकि यह सारी निकटताएं हमको प्राप्त हो सकें, क्योंकि जब युसूफ़ ही नहीं रहेंगे तो सेवा करने वाला भी हमारे सिवा कौन होगा, इसलिए यह सोचा कि उनको किसी के हाथ गुलाम बनाकर बेच दिया जाए।

अतः हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को उनको भाइयों ने इस तरह कुवें में डाला कि वे कुवें में बने हुए एक ताक़ में बैठ गए। उनकी नियत यह थी कि इस भांति डालने से किसी काफ़िले ने यहां से गुज़रते हुए पानी पिया और यह बरामद हुए तो वे इनको अपना गुलाम बना लेंगे। उस समय हम उनके दावेदार बनकर खड़े होंगे और कहेंगे कि यह हमारा गुलाम है। अतः यही हुआ कि वहां से एक क़ाफ़िला गुज़रा और उन्होंने डोल में पानी के बजाए बच्चा देखा, उधर उनके भाई सही समय की ताक में रहते थे, जब ऐसा हुआ तभी वे लोग तुरन्त दावेदार बनकर खड़े हो गए, इस पर क़ाफ़िले वालों ने उनको कुछ पैसे दिए और हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को लेकर आगे चल दिए। अन्ततः मिस्र के बाज़ार में आपकी बोली लगाई गई, संयोगवश अज़ीज़–ए–मिस्र (मिस्र का बादशाह) को उस समय एक गुलाम की आवश्यकता थी, उसके नुमाइन्दे भी उस बाज़ार में मौजूद थे, जब उनकी नज़र इस ख़ूबसूरत बच्चे पर पड़ी, जिसके चेहरे से शराफ़त झलक रही थी तो उन्होंने उनको ख़रीद लिया और अपने घर गुलाम बनाकर ले आए।

भाइयों की ईर्ष्या ने उनको कुवें में ढकेला और कुवें के अंधेरे के बाद गुलामी की बेड़िया पड़ गईं। मगर इन सब घटनाओं के पीछे अल्लाह का उद्देश्य यह था कि आप सभी कठिन चरणों से गुज़रने के बाद एक अनुसरण योग्य हस्ती बन सकें। अज़ीज़–ए–मिस्र की बीवी ने हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को देखने के बाद यह फ़ैसला किया कि यदि उनको घर में रखा जाए तो बहुत अच्छा हो, हम उनको अपने बेटे की तरह रखेंगे। अतः इस प्रकार गुलामी के बावजूद हज़रत युसूफ़ (अलैहिस्सलाम) शाही महल में पूरे अमन व सुकून के साथ रहे मगर समस्या उस समय उत्पन्न हुई, जब अज़ीज़–ए–मिस्र की बीवी ने आपके साथ ग़लत काम करने का इरादा किया। सभी दरवाज़े बन्द करके उनको बुरे काम की दावत दी, मगर हज़रत युसूफ़ नवजवान होने के बावजूद अपनी जगह दृढ़ रहे और कहा कि हम अपने मालिक के घर में ऐसा काम नहीं कर सकते, जबकि उन्होंने हमें अच्छा ठिकाना दिया, इज़्ज़त भी बख़्शी

है। यदि हमने ऐसा किया तो, हद से बढ़ने वाले कभी सफल नहीं होते। कुरआन मजीद में आता है कि दूसरी तरफ़ अज़ीज़–ए–मिस्र की बीवी की ज़िद और मालिकाना हक़ होने की वजह से दबाव भी इतना ज़्यादा था कि यदि हज़रत यूसुफ़ ने अपने रब की ओर से निशानी न देखी होती तो शायद वे भी प्रभावित हो जाते। नौबत यहां तक आ पहुंची कि जब हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) दरवाज़े की ओर जान छुड़ाकर लपके तो वह भी पीछे–पीछे भागी और बुरी नियत से उनकी क़मीज़ को इतनी तेज़ी से पकड़ा कि वह फट गई, किन्तु यह केवल ग़ैबी इशारे की बात थी कि वे अपनी जगह डटे रहे, जब दरवाज़े पर पहुंचे तो उसी समय अज़ीज़–ए–मिस्र ने देख लिया, जिसको देखते ही उसकी बीवी ने यह बयान दिया कि इसने मुझे बुरे काम की दावत दी, और मेरे साथ ग़लत इरादा किया, अब इसको सख़्त से सख़्त सज़ा होनी चाहिए, या फिर इसको सूली पर लटका दिया जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) चूंकि ग़ुलाम थे, ज़्यादा ज़बान भी खोलना उनके लिए जुर्म था, इसलिए उन्होंने बहुत कम शब्दों में यह कहना चाहा कि बात ऐसी नहीं है, बल्कि इस औरत ने ख़ुद हमें बहकाने की कोशिश की थी, अल्लाह की मदद यह हुई कि शाही महल के किसी कर्मचारी ने अज़ीज़–ए–मिस्र को यह सलाह दी कि कमीज़ पीछे से फटी हुई होगी तो इसका मतलब यह होगा कि आपकी बीवी की ग़लती थी और अगर आगे से फटी हुई है तो इसका मतलब यह है कि युसूफ़ (अलैहिस्सलाम) की ग़लती थी। जब देखा तो मालूम हुआ कि कमीज़ पीछे से फटी हुई थी और ग़लती उनकी बीवी की थी इसलिए अज़ीज़–ए–मिस्र ने मामले को दरगुज़र कर दिया और क़िस्से को यहीं दफ़न करने की कोशिश की, क्योंकि ग़लती ख़ुद की बीवी की थी, यदि उसको सज़ा देता तो बदनामी का कारण बनती। यह सारा क़िस्सा यद्यपि कुछ समय के लिए दफ़न करने की कोशिश की गई, लेकिन धीरे–धीरे पूरे महल में बात फैल गई। इसलिए अज़ीज़–ए–मिस्र ने इस बात को दफ़नाने की यह योजना अपनाई कि कुछ दिनों के लिए यूसुफ़ को जेल में रखा जाए, ताकि बात दब जाए, अतः आपको जेल की राह देखनी पड़ी। वहां की परेशानियां बर्दाश्त कीं और एक अर्से के बाद सम्मान के साथ रिहा हुए।

हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) और दूसरे नबियों (अलैहिस्सलाम) को आज़माइश के जिन चरणों से गुज़ारा गया है, उनके बारे में यह बात ध्यान में रखना चाहिए कि उनका मक़सद यह होता है कि एक नबी हर तरह के हालात का समझने वाला बन सके। क्योंकि मानवीय समाज में हर स्वभाव के एवं हर प्रकार के हालात से प्रभावित लोग होते हैं। उनमें अमीर, ग़रीब, यतीम, शरीफ़, ज़ालिम, चोर, जाहिल, आलिम (ज्ञानी) हर प्रकार के लोग पाए जाते हैं और नबियों को उन विभिन्न प्रकार के लोगों को उस चीज़ की तरफ़ ले जाना होता है जो चीज़ मुशाहदे (अवलोकन) में नहीं है, न ही उस पर उनको कोई बज़ाहिर दुनियावी फ़ायदा होता है बल्कि इसका संबंध केवल ग़ैब पर ईमान और यक़ीन करने से है। केवल यही नहीं बल्कि इसके साथ–साथ लोगों की ग़लत आदतों को छुड़ाना होता है। मन की इच्छाओं के ख़िलाफ़ काम कराना होता है। अपनी बात पर भरोसा दिलाकर एक अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी को चलाना होता है। इसलिए ऐसा मुश्किल काम करने से पहले नबियों को लोगों ही के सामने उन सभी चरणों से गुज़ारा जाता है जिसके बाद यदि यह लोग अपनी कोई भी बात किसी भी वर्ग के लोगों के सामने रखें तो उसको स्वीकारने में कोई असमर्थ न हो। यह इन्सानी अक़्ल में आने वाली बात भी है कि इन्सान उसी की बात पर यक़ीन करता है जिसका कोई अनुभव हो। कोई आम राहगीर जिससे कोई परिचित न हो, चाहे बड़े–बड़े दावे करे, मगर लोग उसकी बात पर यक़ीन नहीं करेंगे। यूं तो अल्लाह तआला की वहदानियत (एकेश्ववाद) को पहचानने की बेशुमान निशानियां ज़मीन व आसमान में बिखरी पड़ी हैं, मगर हालात के ख़राब होने और शैतान के मुलम्मा साज़ियों के नतीजे में कभी–कभी इन्सान की आंखों पर उन सभी हक़ीक़तों की तरफ़ से पर्दा पड़ जाता है, जिसको हटाने के लिए नबी (अलैहिस्सलाम) दुनिया में आते हैं और अल्लाह तआला अनुभवों के चरणों से गुज़ार कर उनके द्वारा ऐसे गूढ़ व ज़ोरदार अंदाज़ में सच बात पहुंचा देता है कि सच से परहेज़ करने वालों के ख़िलाफ़ साफ़ तौर से दलील स्थापित हो जाती है। इसीलिए कुरआन मजीद में बहुत साफ़ तौर पर अल्लाह तआला की निशानियां बयान कर दी गईं हैं। समन्दर में कश्तियों का चलना, सूरज–चांद का निकलना, बंजर ज़मीन में ग़ल्ला पैदा हो जाना, यह सब वे निशानियां हैं जिन पर ग़ौर करने से पता चलता है कि उनके पीछे कोई न कोई ज़ात ज़रूर है जो हर चीज़ को अदम से वजूद में लाती है।

तब्लीग़ व दावत मानवता की मसीहाई

मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी

इस्लाम से पहले की सभ्यता व संस्कृति का अध्ययन करने के बाद यह बात खुलकर सामने आ जाती है कि इस्लाम ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कितनी बड़ी सेवा प्रदान की है। डूबती कश्ती को किनारे तक पहुंचा दिया, रोती–बिलबिलाती मानवता पर होने वाले अत्याचारों की समाप्ति की और उसे श्रेष्ठता तक पहुंचाया। इस्लाम ने यह सेवा ऐसे समय प्रदान की है जब मानवता अत्याचार व बरबरियत से कराह रही थी। एक परिवार के गिने–चुने सदस्य पूरी दुनिया के लोगों पर अपना वर्चस्व स्थापित किये हुए थे और मनुष्य के साथ गधे व कुत्ते सा बर्ताव करते थे। उनको मनोरंजन का साधन बनाते थे। इस्लाम का यह बड़ा कारनामा नहीं है कि उसने इन्सान को इन्सान के साथ जीने का तरीक़ा सिखाया?मरी हुई अन्तरात्मा को जगाया, हक़ के लिए आवाज़ उठाना सिखाया और उसको रुत्बा व श्रेष्ठ स्थान दिया।

हज़रत शाह वलीउल्लाह रह0 ने अपनी किताब "हुज्जतुल्लाह अलबालिग़ा" में इस्लाम से पहले कि इस स्थिति की पूरी तस्वीर खींची है, वे कहते हैं:

"सदियों से स्वतन्त्र रूप से शासन करते–करते और संसार के आनन्द में पड़े रहने और आख़िरत को ज़्यादातर भूल जाने और शैतान के फन्दे में आ जाने की वजह से ईरानियों और रूमियों ने ज़िन्दगी की आसानियों और सामान में बड़ी नाज़ुक ख़्याली पैदा कर ली थी और इसमें हर प्रकार की उन्नति व नफ़ासत (श्रेष्ठता) में एक दूसरे से आगे बढ़ जाते और गर्व करते थे। दुनिया के विभिन्न हिस्सों से उन केन्द्रों में बड़े–बड़े सज़ा पाए हुए और हुनरमन्द जमा हो गए थे जो उन ऐश के सामानों में नज़ाकतें पैदा करते थे और नित नई चीज़ें उत्पन्न करते थे। उन पर फ़ौरन अमल शुरू हो जाता था और इसमें लगातार इज़ाफ़े और नयापन होता रहता था, और इन बातों पर गर्व किया जाता था। जीवन का स्तर इतना श्रेष्ठ हो गया कि अमीरों में से किसी को एक लाख दिरहम से कम का पटका बांधना और ताज पहनना बहुत बुरा समझा जाता था। अगर किसी के पास आलीशान महल, फ़व्वारा, बाग़, अच्छे–अच्छे जानवर, अच्छे दिखने वाले जवान और ग़ुलाम न होते, खाने में तरह–तरह की चीज़ें और लिबास व पहनावे में तड़क–भड़क न होता तो साथ वालों में उसकी कोई इज़्ज़त न होती। इसकी तफ़सील बहुत लम्बी है। अपने देश के बादशाहों का जो हाल देखते और जानते हो उससे अंदाज़ा लगा सकते हो।"

यह सभी तकल्लुफ़ात उनकी ज़िन्दगी और समाज का हिस्सा बन गए थे और उनक दिलों में इस तरह रच–बस गए थे कि किसी तरह निकल नहीं सकते थे, इसके कारण एक ऐसी लाइलाज बीमारी पैदा हो गई थी जो उनके पूरे शहरी जीवन और उनकी पूरी सभ्यता व व्यवस्था में पेवस्त हो गया था। यह बहुत बड़ी मुसीबत थी जिससे आम व ख़ास और अमीर व ग़रीब में कोई सुरक्षित नहीं रहा था। हर नागरिक दिखावे की और शही जीवन व्यतीत करने में ऐसा मस्त था, जिसने उसको ज़िन्दगी से आजिज़ कर दिया था और उसके सर पर ग़म का पहाड़ हर वक़्त रखा रहता था। बात यह थी कि दिखावा व आडम्बर अत्यधिक रूपये ख़र्च किये बिना प्राप्त नहीं हो सकते थे और यह राशियां और बेइन्तिहा दौलत किसानों, व्यापारियों और दूसरे पेशावरों पर टैक्स बढ़ाने और उन पर तंगी किये बिना पूरी नहीं हो सकती थी। यदि वे करों के अदा करने से इनकार करते तो उनसे जंग की जाती और उनको सज़ाएं दी जाती और यदि वे सब्र करते तो वे उनके साथ जानवरों जैसा बर्ताव करते।

इसमें ज़रा भी संदेह नहीं कि अजमी (ग़ैर अरबी) सभ्यता व संस्कृति ने मनुष्य को ऊंच–नीच, अमीर–ग़रीब, ताक़तवर व कमज़ोर दो वर्गों में बांट दिया है। ईर्ष्या, नफ़रत, पक्षपात, नस्ली भेदभाव के बीज दिलों में बो दिये और इन्सानी ख़ून और उसके मान–सम्मान के एहसास को ख़त्म कर दिया, जिसके परिणाम में इन्सानी ख़ून की होली खेली गई, मानवमूल्यों को रौंदा गया और पूरी दुनिया अत्याचार, बरबरियत व शैतानियत का शिकार हो कर रह गई लेकिन इस्लाम ने मनुष्य के मूल्य को बढ़ाकर अन्तिम चरण तक पहुंचा दिया और दुनिया वालों के सामने भाईचारा एवं हमदर्दी का हसीन गुलदस्ता पेश किया और साफ़ तौर पर यह ऐलान कर दिया कि सभी इन्सान बराबर

हैं। किसी इन्सान को दूसरे इन्सान पर ज़रा भी श्रेष्ठता नहीं। नबी करीम स0अ0 का खुला हुआ ऐलान इन्सानी बराबरी की खुली दलील है कि, "न अरबी (आर्य) को अजमी (द्रविड़) पर, न काला–गोरे से बढ़ा हुआ है, न गोरा–काले से, सिर्फ़ तक़्वे (आत्मनिग्रह) के आधार पर उन्हें श्रेष्ठता है, तुम सब आदम की औलाद हो और आदम मिट्टी से बनाए गये थे।"

इसी तरह क़ुरआन पाक ने ऐलान करते हुए मनुष्य की वास्तविकता से परिचित कराया:

"ऐ लोगो! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया, और तुमको अलग–अलग क़ौमें और ख़ानदान बनाया ताकि एक दूसरे की पहचान कर सको, अल्लाह के निकट तुम सबमें बड़ा शरीफ़ वही है जो सबसे ज़्यादा परहेज़गार (संयमी) हो।"

रंग व नस्ल, जिन्स व माल, ताक़तवर व कमज़ोर के सभी अन्तर को एकबार में समाप्त करके सभी इन्सानों को यह सबक़ सिखाया कि ख़ुदा की रस्सी को मज़बूती से थामे रहने ही में उसकी भलाई छिपी हुई है। इसी तरह उस पीड़ित व परेशानहाल इन्सान को भाईचारा व मुहब्बत, बराबरी व उदारता का सबक़ याद दिलाते हुए उसके ख़ून व इज़्ज़त के लिहाज़ से भी परिचित कराया और यह भी बता दिया कि जाहिलियत ने उन्हें किस प्रकार आग के मुख पर लाकर खड़ा कर दिया था और इस्लाम ने उसमें गिरने से किस तरह बचा लिया। मानवता पर उसका यह एहसान और ईनाम नहीं है तो और क्या है?क़ुरआन पाक अपने ईनामों को बयान करते हुए यूं कहता है:

"और तुम सबके सब अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ लो और फ़िरकों में न बटो।"

आज मानवीय समाज पर भौतिकता का जो जाल फैला हुआ है और पूरी दुनिया में उससे जो शोर मचा हुआ है इस क्रम में यदि हम विचार–विमर्श करते हुए मानवता के पतन के कारणों को तलाश करें तो अनिवार्य रूप से भौतिकता को ही इसका सबसे बड़ा कारण घोषित करना पड़ेगा। अतः आज का सभ्य मनुष्य इसी तरह हैरान व परेशान है, जिस तरह अज्ञानता के युग में था। इसकी इस परेशानी व बदलाही के कारणों के नाम बदल गए वरना जहां तक ज़ुल्म व अत्याचार व हिंसा का प्रश्न है वह आज भी उसी प्रकार है जैसे इस्लाम आने के पहले था। चाहे वह सभ्यता व संस्कृति के नाम पर हो या कल्याण या जीवन स्तर के श्रेष्ठ होने के आधार पर।

आप स्वयं देखते हैं कि क्या काले–गोरे के नाम पर आज जंग नहीं छिड़ी? क्या वर्णवाद आज नहीं पाया जाता? क्या ऐश्वर्य में पलने वाले और उच्चाधिकारियों का वर्ग अपनी दौलत व माल के आधार पर इतराता हुआ नज़र नहीं आता? क्या रंग व ख़ून, नस्ल व ख़ानदान का फ़र्क़ आज बाक़ी नहीं? क्या कमज़ोर वर्ग को एक तुच्छ ग़ुलाम का सा जीवन आज गुज़ारना नहीं पड़ता? क्या मज़दूर पेशा वर्ग एक निवाला भोजन के लिए मेहनत व श्रम नहीं करता? क्या यह सब रोम व फ़ारस की सभ्यता व संस्कृति और सामाजिक ढांचे से बढ़कर हमारे ज्ञानियों, बुद्धिजीवियों व साहित्यकारों के कल्चर में नहीं पाया जाता? क्या एक कमज़ोर इन्सान से उसके जीवन का अधिकार नहीं छीना जाता? क्या उसको तपती हुई आग व लू में नहीं लिटा दिया जाता? क्या उसकी खाल बकरी व ऊंट की तरह नहीं खींची जाती और उसको अपमानित नहीं किया जाता? क्या एक लाडले बच्चे को उसकी मां, पति को पत्नी और औलाद को माता–पिता के सामने नहीं ज़िबह किया जाता? इस प्रकार की कितनी मिसालें हैं जो आज हम अपनी आंखों से देखते हैं।

बल्कि हक़ीक़त यह है कि इस सभ्य समाज में ज़ुल्म व अत्याचार, ज़िल्लत व रुसवाई, जुर्म व हिंसा, हिस्र व लालच, झूठ और धोखे का वातावरण जितना आम है, इस्लाम से पहले वाले ज़माने में इतना न था। जाहिलियत के दौर का इन्सान को इतने कठिन समय का सामना न था, जितना की आज के सभ्य मनुष्य को सभ्यता व कला के कारण है। आज तो यह हाल है कि हिंसा व अत्याचार, ग़ुलाम व अधीन बनाने, अधिकारों का हनन करने, अपमान को बहुत बड़ा कामयाब फ़न समझा जाने लगा, और दीन व आचार–व्यवहार का लबादा ओढ़कर उसकी आड़ में लोगों ने जो ढ़ोंग मचा रखा है यह भी आज का एक सफल हुनर माना जाता है।

इन प्रतिकूल हालात में जिस तेज़ी के साथ व्यवहारिक, धार्मिक एवं मानवीय मूल्यों का हनन हो रहा है, वास्तव में इसका कारण इच्छाओं की पूर्ति ही है। इस स्थिति ने वर्तमान जीवन में, फ़लसफ़ा, ज्ञान व विचारों की कई शक्लें पैदा कर दीं और इस पर चर्चा करने वालों ने अक्ल व सोच के आधार पर विचार प्रस्तुत किए और नये–नये दृष्टिकोणों से तरह–तरह के विचारों को जन्म दिया... (शेष पेज 8 पर)

ख़ैर व बरकत वाला निकाह

मौलाना अब्दुल करीम पारिख रह०

कामयाब निकाह वह है, जहां शरीअत की सीमाओं को लांघा न जाए। ख़ुशी–ख़ुशी सारे काम सादगी से किये जाएं। दुल्हन घर आई, उसके मां–बाप पर तिलक–दहेज के बारे में कोई एतराज़ न हो। हंसी–ख़ुशी हर छोटे–बड़े ने नई दुल्हन का स्वागत किया। आने वाली ने अपने सास–ससुर को मां–बाप की जगह समझा और अपने पति को अपने सर का ताज माना।

दूसरी तरफ़ दूल्हे ने उस दुल्हन को पाकर अपना आधा ईमान पूरा किया। पारिवारिक बंधन में बंधकर उस पत्नी का पति अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने में लग गया। दुल्हन ने नन्द और देवर को अपना भाई–बहन माना। घर के काम–काज को अपनी ज़िम्मेदारी में लिया। अगर कम आमदनी वाला घराना है तो धोबी और दर्ज़ी के घर जाने वाली रक़म को रोक लिया और घरेलू ख़र्चो में कमी करके बचत भी ठीक–ठाक कर ली।

फिर एक मुसलमान औरत अपने कर्तव्यों के निर्वाह हेतु नमाज़ व क़ुरआन–ए–मजीद की तिलावत द्वारा ख़ुदा की बरकत के आने का कारण बनी।

दुल्हन ने आते ही घर में सलीक़े से रख–रखाव क़ायम कर दिया। पति जब घर आए तो मुस्करा कर उसका स्वागत किया। हर प्रकार का बनाव–श्रंगार केवल अपने पति के लिए किया, ताकि पति को दुनिया में केवल अपनी ही पत्नी सुन्दर व चरित्रवान लगे। औलाद की परवरिश और शिक्षा व प्रशिक्षण में वह सलीक़ा की मुहल्ले व पड़ोस में घर के बच्चे मिसाली बच्चे कहे जाने लगें।

पति के घर आने पर कोई शिकवा–शिकायत उसकी मां–बहन के बारे में नहीं, मुहल्ले–पड़ोस में भी किसी से लड़ाई–झगड़ा नहीं किया। नये मां–बाप और नये भाई–बहन उस दुल्हन पर ऐसे फ़िदा कि मैके चली जाए तो नया घर सूना, और ससुराल चली जाए तो पुराने घर के लोग देखने को तरस जाएं।

अच्छा घर वह है जहां हर समय कोई न कोई काम में लगा हुआ हो या फिर कोई तिलावत कर रहा हो। कोई अच्छी किताबें पढ़े, यह सब काम पति–पत्नी और घर के सारे लोग एक–दूसरे के सहयोग से जारी रखे हुए हों। नया घर बसा कर दूसरे रिश्तेदारों से निभाव और बनाव को बड़े पैमाने पर क़ायम कर दिया गया हो। ख़ैर–खैरात, आख़िरत का सवाब और अल्लाह की रज़ा की नियत से जारी हों। ग़रीबों को खाने खिलाए जांए, यदि ग़रीबी हो, हाथ तंग हो तो सालन में कुछ पानी बढ़ा दिया जाए, मगर अल्लाह की राह में कुछ न कुछ उन ग़रीब लोगों को दिया जाए, तौबा व इस्तिग़फ़ार, अल्लाह की ओर आकर्षित होना, यह सब काम हों तो चुग़ली व ग़ीबत का मौक़ा ही न आए। घर को नुबूव्वत की रोशनी से ऐसा रोशन किया जाए कि अंधेरा लापता हो जाए। यह सारी बातें निकाह की कामयाबी का सुबूत हैं।

एक अच्छे ख़ानदान की बेहतरीन ख़ूबी यह है कि लोगों के आपस में मधुर संबंध हो, घर के लोगों के बीच प्रेम हो, वे एक–दूजे का सहारा हों, कोई भी पत्थर दिल न बन जाए, न कोई किसी पर अत्याचार करे।

दीन–ए–इस्लाम अपने मानने वालों को चट्टान की भांति अडिग देखना चाहता है। इस मज़बूत चट्टान का आधार वह परिवार है जिसे औरत–मर्द मिलकर बनाते हैं। औरत–मर्द के संबंध ख़राब होने पर परिवार बिखर जाता है। इब्लीस (शैतान) के लिए इससे बढ़कर कोई सफलता नहीं हो सकती कि पति–पत्नी में रंजिश पैदा कर दे और बस बाक़ी सारे काम अन्तिम चरण तक

पहुंचते–पहुंचते पति–पत्नी स्वयं कर डालते हैं, लेकिन कामयाब निकाह वाले घर के लोग, इब्लीस को इस मोर्चे पर भी दफ़न करके रहते हैं।

ऐसे सफ़ल घरेलू जीवन का नुस्ख़ा स्वयं कुरआन मजीद में अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया कि:

"अल्लाह की नाफ़रमानी से बचो जिसके नाम पर सवाल करते हो और पारिवारिक संबंध को बिगाड़ने से बचते रहा करो।" (सूरह निसा:1)

पारिवारिक संबंध में आदमी के लिए पूरा आदमी बन जाने के बाद उसकी पत्नी बड़ा महत्वपूर्ण स्थान रखती है। पति को चाहिए कि हर तरह अपनी पत्नी की दीन व दुनिया की हर ख़ुशी का पूरा ध्यान रखे। हदीस शरीफ़ में अच्छा आदमी उसी को कहा गया है जो अपने परिवार के लिए ख़ैर ही ख़ैर हो।

पति के लिए आवश्यक है कि बनाव–श्रंगार का साधन स्वयं ही बन कर दिखाए। उसकी रुचि के कार्यों में सहयोग करे, घरेलू कामों में जितना हो सके सहयोग करे, पत्नी को नौकर–चाकर की तरह नहीं बल्कि मलिका और स्वयं अपना आधा ईमान स्वीकार करे।

घर में होने के समय भी अपने को अच्छे लिबास में पत्नी के ध्यान का केन्द्र बनाए। जो लोग बाहर तो ख़ूब बन–संवर कर जाते हैं और घर पर फटी लुन्गियां और मैली बनियान पहन कर रहते हैं, उन्हें सफल पारिवारिक जीवन के लिए अपने कपड़ो का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। यह कोई अच्छी बात नहीं कि पत्नी जब घर के बाहर जाए तो अच्छे लिबास में जाए और घर में सर झाड़–मुंह फाड़ बैठी हो, ऐसी दुल्हन सफल निकाह का आनन्द नहीं ले सकती। इसी तरह जो भाई अपने दोस्तों के बीच ख़ूब बन संवर कर जाए और घर में अपनी पत्नी के प्रति आकर्षण का ध्यान न दे वह भी इस प्रसन्नता से वंचित रहेगा।

बाज़ार, सिनेमा और नाटक में दिखने वाली औरतें अपने बनाव–श्रंगार में बाज़ारी हद तक साज–सज्जा करते हैं। घरेलू जीवन वाले जब इन दायरे में अपने जोड़े को देखते हैं तो उन्हें बड़ी मायूसी होती है। इसका इलाज यह है कि घर के वातावरण को बहुत ही साफ़–सुथरा और पवित्र रखें, फिर देखिए बाज़ार की ज़ीनत और घर की ज़ीनत का मुक़ाबला हो तो दिल का सुकून अल्लाह ने चाहा तो हर मोमिन को घर में होगा।

वास्तविक आकर्षण पवित्रता, पाकीज़गी, सुथराई और सलीक़ामन्दी में पायी जाती है। मिल्लत के भाई–बहनों का ख़्याल इस तरफ़ आए तो अल्लाह ने चाहा तो घर जन्नत बनते देर नहीं लगेगी।

शेष: तब्लीग़ व दावत–मानवता की मसीहाई

जिससे ऐश परस्तों का स्थान और ऊंचा हो गया। यह ऐशपरस्ती, गर्व व अभिमान उन्हीं विचारों का परिणाम हैं।

अब सोचने की बात यह है कि यह बिगाड़ कैसे दूर हो। केवल उम्मीद व आरज़ू, इस्लाम के सिद्धान्त को पेश कर देने और क़लम व ज़बान से बुराइयों व अच्छाइयों में अन्तर कर देने से यह अन्तर नहीं दूर हो सकता, बल्कि इस बीमार समाज की मसीहाई (जीवनदान) के लिए तब्लीग़ व दावत (धर्म के प्रचार–प्रसार) के साथ–साथ कथनी–करनी में समानता पैदा करके इस्लामी चरित्र को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता होगी। हमारी कथनी–करनी में अन्तर से यह फ़साद व बीमारी कभी दूर नहीं होगी।

इस्लाम हमसे यही चाहता है और यही इसका उद्देश्य भी है। इससे पहले मुसलमानों को इतनी कठिन परिस्थितियों का सामना नहीं था, जितना आज है, और विशेषतय: यह सदी हिजरी तो तरह–तरह के चैलेंज लेकर सामने आयी है। ऐसे समय में हमारा ख़ामोश बैठना यक़ीनन कुरआन की आयत: "तुममें एक जमाअत ऐसी होनी चाहिए जो भलाई की ओर बुलाए।" के विपरीत होगा। अब समय आ गया है कि हम इल्म व अमल (ज्ञान व कर्म) के हथियार से लैस होकर इस दुखी मानवता को उसका सबक़ याद दिलाएं। कुरआन–ए–पाक में नबी–ए–करीम (स0अ0) से लोगों को अमल (कर्म) पर उभारने हेतु कहा गया है। कुरआन कहता है:

"आप कह दीजिए कि जो चाहे अमल किए जाओ, सो अभी देखे लेता है तुम्हारे अमल को अल्लाह तआला और उसका रसूल और ईमान वाले।"

तहारत के मसाइल

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

हर वह व्यक्ति जिसके पास स्वस्थ स्वभाव है और उसकी फ़ितरत भी सही है वह पाकी (स्वच्छता) को पसंद करता है। ऐसे ही हर धर्म जो सही नियमों एवं नबियों के बताए हुए रास्ते पर क़ायम है और उसके यहां पाकी का और गन्दगी से अपने आप को दूर रखने का विशेष प्रबंध होता है। अल्लाह तआला ने पाकी को मनुष्य के स्वभाव में रखा है। इसीलिए आम तौर पर अपने–अपने तौर पर लोग पाकी का प्रबंध करते हैं। माएं अपने बच्चों को नहलाती–धुलाती हैं, यह भी पाक–साफ़ करने की एक व्यवस्था है और बिस्तरों को धोया जाता है, यहां तक कि स्वयं को भी धोया जाता है, यह सब पाकी के ही अन्तर्गत है। अल्लाह तआला ने इन्सानों के अन्दर अपने को ठीक रखने और साफ़ रखने का गुण रखा है और क्योंकि इस्लाम सम्पूर्ण दीन (धर्म) है और अल्लाह तआला ने इसको पूरी तौर पर बाक़ी रखा है इसलिए इसमें पाकी (स्वच्छता) का विशेष ध्यान रखा जाता है, जितना दुनिया के किसी दूसरे धर्म में नहीं पाया जाता। लेकिन इस्लाम ने पाकी (स्वच्छता) का वर्गीकरण किया है। नम्बर एक पर आरम्भिक वर्ग की चीज़ नज़ाफ़त है, इसका भी इस्लाम ने पूरा ध्यान रखा है और नज़ाफ़त में वे सारी चीज़ें हैं जिसको घरों की सफ़ाई, आंगन की सफ़ाई, कमरों की सफ़ाई का हम लोग नाम देते हैं। इसी तरह मस्जिदें मैली हो जाती हैं तो उनको झाड़ा जाता है, उन पर रंग करवाया जाता है। यह सारी चीज़ें नज़ाफ़त से संबंध रखती हैं और इसी प्रकार मानव शरीर में भी नज़ाफ़त का प्रबन्ध करवाया गया है जिसको फ़ितरत का नाम दिया गया है कि नाख़ून काटे जाएं, दाढ़ी–मूंछें, बाल और आंखों को भी सही रखा जाए, तेल का भी प्रयोग किया जाए, इसके अतिरिक्त शरीर को धोया जाए इत्यादि। यह सारी चीज़ें शुरूआती चरण में शामिल हैं, जिनको हर आदमी अपने–अपने अंदाज़ से करता है और जो व्यक्ति ऐसा नहीं करता है तो उसके घरवाले बुरा समझते हैं, इसीलिए इसको फ़ितरत (स्वभाव) में शामिल किया गया है।

इस्लाम के अन्दर उसके बाद दूसरा चरण तहारत (पाकी/पवित्रता) का है और तहारत के लिए इस्लाम का कहना है कि शरीर एवं उसके अंगो को विशेष तरीक़े से धोया जाए और इस प्रकार से धोने को मानो इस्लाम की एक पहचान भी बना दिया गया है, अर्थात वुज़ू करने का हुक्म दिया गया है, जिसको करना मुसलमान होने की पहचान है और इसका उद्देश्य यही होता है कि आदमी के विचार भी अच्छी तरह पाक–साफ़ हो जाएं और अल्लाह के नज़दीक भी पाक हो जाए क्योंकि ख़्यालों का मनुष्य पर असाधारण असर पड़ता है और इसीलिए इसमें नियत का भी आदेश दिया गया है कि वुज़ू और ग़ुस्ल (स्नान) नियत करके करना चाहिए, इसलिए कि जब नियत के साथ किया जाएगा तो इसका फ़ायदा भी भरपूर मिलेगा। इसीलिए हदीस में आता है कि इन्सान जब शरीर के अंगों को धोता है तो उसके गुनाह पानी के साथ गिरते हैं और यूं भी जब इन्सान नियत के साथ वुज़ू करता है तो उसका पहला फ़ायदा यह होता है कि उसकी पूरी तरह से ऊपरी सफ़ाई भी हो जाती है। दूसरे उसके हाथ से जो गुनाह हुए होते हैं, वे भी झड़ जाते हैं। पता चला कि इस्लाम ने दो विचार दिये हैं, एक ज़ाहिरी सफ़ाई और एक अन्दरूनी सफ़ाई। ज़ाहिरी सफ़ाई तो हाथ का धो लेना है और अन्दरूनी सफ़ाई वह है कि जब आदमी गुनाह करता है तो सर के अन्दर ख़राबी आ जाती है लिहाज़ा जब चेहरा धुलता है तो इन्सान के सर के गुनाह झड़ जाते हैं।

इसी तरह पूरे शरीर का मामला है क्योंकि आदमी न जाने कैसे–कैसे गुनाहों में पड़ा रहता है, जिनकी वजह से गंदगी पैदा हो जाती है और गुनाह गंदगी का नाम है, जिसके बहुत से प्रकार है जैसे ग़ुस्ल (स्नान) की अनिवार्यता सम्भोग इत्यादि होने या वीर्य के निकलने पर पड़ती है जिसकी वजह से आदमी को स्नान करना पड़ जाता है और यदि कोई केवल इस्तिन्जा (मल–मूत्र त्याग) इत्यादि करे या केवल रियाह ख़ारिज हो जाए तो वुज़ू पर्याप्त होता है। ऐसे ही कई बार ऐसा गुनाह हो जाता है जिससे ईमान टूट जाता है, जैसेः कुफ़्र और शिर्क से ईमान टूट जाता है और बिदअत व ख़ुराफ़ात से ईमान हिल जाता है और दूसरे जो गुनाह हैं उससे ईमान में कमज़ोरी आ जाती है। इसीलिए अल्लाह तआला ने इन्सानों को पाक–साफ़ रखने के लिए क्रम बनाया है। जिसका पहला चरण नज़ाफ़त है, अतः हर व्यक्ति को इन्सानी एतबार से

पाक–साफ़ रहना चाहिए और अगर कोई शख़्स ईमान वाला है तो वह नज़ाफ़त में नेक नियत भी कर ले तो उसका स्थान और बुलन्द हो जाएगा और उसके बाद दूसरा दर्जा तहारत के अपनाने का है। यानि अगर कोई इन्सान इस्तिन्जा से आया है या रियाह ख़ारिज हुई है तो उसको वुज़ू कर लेना चाहिए ताकि इस्तिन्जा और रियाह में इतनी देर ग़फ़लत में रहने की वजह से जो एक कुदूरत पैदा हो जाती है वह वुज़ू के ज़रिए धुल जाए और आदमी इससे पाक हो जाए। इसीलिए तहारत में इन्सान की नियत जितनी अच्छी होती है उतना ही उसका स्थान श्रेष्ठ होता चला जाता है। जैसा कि हदीस में आता है कि सख़्त सर्दी के ज़माने में मुश्किल के बावजूद पूरे तौर पर वुज़ू करने से इन्सान के सारे गुनाहों को माफ़ कर दिया जाता है और उसके स्थान को बुलन्द कर दिया जाता है।

तहारत के बाद तीसरा दर्जा तज़किया का है जिसका संबंध दिल व दिमाग़ से है और इसका मतलब यह है कि इन्सान अपने दिमाग़ को बुरे ख़्यालों से पाक कर ले और दिल की जो बीमारियां है उनको दिल से निकाल दे तो दिल का तज़किया हो जाएगा और दिमाग़ का तज़फ़िया हो जाएगा और वह वास्तव में मुसलमान हो जाएगा। क्योंकि मोमिन (सच्चा मुसलमान) उसी को कहते हैं जो पाक व साफ़ हो, उसके अन्दर शिर्क का, कुफ़्र का, गन्दगी का संदेह भी दिल व दिमाग़ के अन्दर मौजूद न हो। पता चला कि जिसका ईमान इस दर्जे का हो वह मोमिन है और ईमान सबसे बड़ी चीज़ है। उससे बड़ी कोई चीज़ नहीं है, लेकिन याद रहे कि ईमान का संबंध दिल से है।

ईमान के दिल से संबंध को यूं समझा जा सकता है ईमान मानो गवर्नरी की तरह है। हालांकि ईमान तो बुलन्द हैसियत वाला है, जिसके सामने राष्ट्रपति भी कुछ नहीं है लेकिन समझाने के लिए यह मिसाल बयान की जाती है: जैसे किसी देश का सदर (राष्ट्रपति) हो और वह किसी शहर में जलसे (सभा) के अन्दर शामिल होने के लिए आ रहा हो, तो वह जहां बैठेगा, उसकी जगह की अच्छी तरह सफ़ाई की जाएगी, स्टेज को लुभावना बनाया जाएगा, गलियों को महकाया जाएगा, और जिस कुर्सी पर बिठाया जाएगा उसको अच्छी तरह सजाया जाएगा ताकि गवर्नर साहब नाराज़ न हो जाएं। इसीलिए उनका उसी प्रकार स्वागत किया जाएगा अतः ऐसे में जिन सड़कों इत्यादि को साफ़ किया गया है मानो वह नज़ाफ़त का चरण था, और इसके बाद छिड़काव किया जाना है और चूना डालना है और गंदगी इत्यादि की सफ़ाई के लिए मज़दूर को लगाना, यह तहारत का चरण है, और इसके बाद जहां पर वे आकर बैठेंगे वहां चांदनी इत्यादि का बिछाया जाना और फूलों का डालना और आला दर्जे की कुर्सी का रखा जाना , उसके तज़किये का चरण है। लेकिन यहां पर हम लोगों ने ईमान को इतना घटिया समझ लिया कि उसको हर जगह पर घसीटते फिरते हैं, वरना ईमान तो उससे कहीं दर्जे बढ़कर है। इसीलिए ईमान को उन तीनों चरणों की ज़रूरत पेश आती है क्योंकि उसकी हैसियत गवर्नर से कहीं ज़्यादा है। अतः जब यह तीनों चीज़ें होंगी तो वास्तव में इन्सान के दिल में ईमान उसी समय आएगा वरना जिस तरह व्यवस्था की कुछ कमी होने पर गवर्नर साहब नहीं आ सकते, इसी तरह उन तीनों चरणों में से किसी एक के अन्दर कमी होने से ईमान भी दिल में नहीं आएगा।

हदीस में आता है कि जब आदमी ज़िना (अवैध संबंध) करता है तो उस वक़्त वह मोमिन नहीं होता। इसका मतलब यही है कि जिस वक़्त इन्सान गंदा है तो उस वक़्त ईमान में मौजूद नहीं होता बल्कि हट जाता है। जिसको यूं समझा जा सकता है कि जिस तरह कोई व्यक्ति बिना किसी कारण सदर साहब की मौजूदगी में विरोध करे और काला झन्डा दिखाए तो वह चला जाएगा, इसी तरह अल्लाह ने ईमान की जो दौलत अता की है उसके मुक़ाबले में कोई इन्सान कुफ़्र व शिर्क और बिदअत व ख़ुराफ़ात की बातें करे, तो फिर उसका ईमान भी चला जाएगा लेकिन उसके बाद अगर कोई ऐसा व्यक्ति ईमान की तरफ़ दोबारा पलट कर आ जाए तो उसके बारे में दोबारा ख़ुदा की तरफ़ से ऐलान कर दिया जाता है कि उसको यह नेमत दे दी जाए। अब उसके बाद उस शख़्स का जिस दर्जे का ईमान होगा उसी दर्जे में उसे ईमान का मज़ा भी आएगा और उसके बाद अगर ऐसे शख़्स को अल्लाह तआला पाकीज़ा ज़िन्दगी दे दे, जिसको क़ुरआन मजीद में "हयात–ए–तैय्यबा" का नाम दिया गया है। यानि ऐसे व्यक्ति को एक पवित्र और ख़ुशगवार ज़िन्दगी अता होगी। इन्सान के पाक होने का यह फ़ायदा होता है कि जिस तरह पाक मिट्टी को छूने से इन्सान पाक हो जाता है उसी तरह पाक आदमी के मिलने से इन्सान के गुनाह झड़ जाते हैं, जिसकी वज़ाहत हदीस में है कि जब दो मोमिन आपस में मिलते हैं तो उनके गुनाहों को उनके अलग होने के पहले ही माफ़ कर दिया जाता है।

कुरआन का हक़

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

इस पूरी ज़मीन पर अल्लाह का कलाम (कुरआन) एक ऐसा पाक कलाम (वाणी) है जिसके आधार पर इस ज़मीन को आसमानों पर गर्व करने का अधिकार मिलता है। कुरआन मजीद पूरी मानवता की नजात (मुक्ति) का साधन है, सही राह बतलाने वाला है, यद्यपि अमली तौर पर यह उन लोगों के सम्पूर्ण हिदायत है जो अल्लाह का सम्मान करते हैं, उसके आदेशों की पूर्ति करते हैं। कुरआन मजीद में बताए गये आदेशों पर अमल करने से पहले ज़रूरत इस बात की होती है कि इन्सान कुरआन के हक़ को समझने की कोशिश करे। नीचे हम क्रमवार कुरआन के हक़ का वर्णन कर रहे हैं:

1– ईमान (कुरआन पर ईमान लाना)
2– अज़मत (कुरआन की महानता)
3– तिलावत (कुरआन का शुद्ध उच्चारण)
4– हिफ़्ज़ (कुरआन को ज़बानी याद करना)
5– समझ (कुरआन को समझना)
6– अमल (उसके आदेशानुसार कर्म करना)
7– तब्लीग (प्रचार व प्रसार)

आज हमें कुरआन–ए–मजीद के इन बुनियादी अधिकारों की रोशनी में अपना विश्लेषण करने की आवश्यकता है कि हमने किस हद तक इन अधिकारों को पूरा किया है। कुरआन मजीद का पहला हक़ यह है कि इन्सान उस पर ईमान लाए, इस बात का यक़ीन हो कि यह अल्लाह की आख़िरी किताब है और मुक्ति का साधन है। इसका हर एक अक्षर, ज़ेर–ज़बर सब अल्लाह का नाज़िल (अवतरित) किया हुआ है, इसमें कोई बदलाव संभव नहीं है और इसकी सुरक्षा का वादा अल्लाह तआला ने किया है। अगर हम ग़ौर करें तो मालूम होगा कि मुसलमानों की एक बड़ी संख्या ऐसी भी मौजूद है जो कुरआन के हक़ को जानना तो बहुत दूर की बात है, न वह अल्लाह के कलाम से परिचित है, न उसकी महानता से, अगर उनसे कुरआन मजीद पढ़ने की मांग भी की जाए तो पता चलता है कि वे अरबी लिपि ही से परिचित नहीं।

निसंदेह कुरआन के समर्थकों के लिए मुस्लिम समाज की यह ख़स्ताहाली अफ़सोसनाक बात है। हमें यह तय करना चाहिए कि हमारे समाज का हर–हर बच्चा कम से कम कुरआन मजीद पर पुख़्ता ईमान रखने के साथ सही उच्चारण के साथ इसको पढ़ने के लायक़ भी हो, ताकि किसी दर्जे में हम कुरआन मजीद के बुनियादी हक़ अदा करने वाले बन जाएं। तजवीद की मांग यह है कि कुरआन मजीद सुन्नत के अनुसार पढ़ा जाए। यह बहुत महत्वपूर्ण चीज़ है, क्योंकि अगर कोई शख़्स इस तरह तिलावत नहीं कर सकता तो मानो वह कुरआन का हक़ अदा करने वाला नहीं बन सकता।

कुरआन के हक़ में चौथा अहम हक़ "हिफ़्ज़ कुरआन" है। नमाज़ जो कि इस्लाम का आधारभूत हिस्सा है, बिना कुरआन की तिलावत के उसको पूरा करना मुमकिन नहीं। इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि हममें से हर व्यक्ति कम से कम कुछ सूरतें हर हाल में याद कर ले ताकि उसकी नमाज़ सुन्नत तरीक़े के मुताबिक़ अदा हो सके, अगर ऐसा नहीं है तो फिर यह बड़ा अन्याय होगा, फिर दूसरी तरफ़ नमाज़ का हक़ न अदा करना और उसके साथ ईमान का भी हक़ न अदा करना।

हिफ़्ज़ कुरआन के इस अनिवार्य हिस्से के अलावा समाज में कुछ ऐसे लोगों का तैयार होना और इस काम की तरफ़ ध्यान दिलाना भी बहुत ज़रूरी है कि हमारे बच्चों की एक बड़ी संख्या ऐसी हो जिनके सीने पूरी तरह से कुरआन के हिफ़्ज़ से भरे हों। कुरआन की

हिफ़ाज़त का यह एक बहुत बड़ा साधन है। इस नेमत के सीने में सुरक्षित होने से हाफ़िज़ कुरआन की हिफ़ाज़त भी अल्लाह तआला के ज़िम्मे हो जाती है और उसके मां–बाप व ख़ानदान वालों के लिए भी यह सम्मान की बात बन जाती है, जो कि दुनिया की बड़ी से बड़ी डिग्री पाने के बाद भी संभव नहीं।

कुरआन के हक़ में पांचवा हक़ "कुरआन को समझने का है। यह भी कुरआन मजीद के बुनियादी हक़ में से है कि हम कुरआन मजीद के तक़ाज़ों को और उसकी मांगों को जानें, उनको समझने की कोशिश करें, ग़ौर करें कि कुरआन करीम हमसे कौन सी ज़िन्दगी की मांग करता है, वह हमसे किन विशेषताओं की बात करता है, कैसा व्यवहार चाहता है।

छटा अहम हक़ "कुरआन पर अमल" करने का है, वाक़्या यह है कि आज इस्लामी समाज से कुरआन मजीद का यह महत्वपूर्ण हक़ भी ओझल होता जा रहा है। इस हक़ को अदा करने के बाद मुस्लिम समाज का जो व्यवहारिक स्थान होनी चाहिए थी, आज हमारा समाज उससे बिल्कुल दूर नज़र आता है। हर तरह की दुर्व्यवहार, बेहयाई, अश्लीलता, झगड़े, गालियां, गंदगियां, नशे में मस्त होना, क़त्ल व लूटमार जैसी आत्म को झकझोर देने वाली हरकते इन लोगों का पेशा नज़र आती हैं, जो कि एक ऐसी पवित्र पुस्तक के रखने वाले समझे जाते हैं जिसमें जगह–जगह पर बुराइयों पर सख़्त रोक लगाई गयी है और उनके भयानक नतीजों से आगाह किया गया है।

आज अगर एक तरफ़ कुरआन के आदेशों पर नज़र डाली जाए और दूसरी तरफ़ मुसलमानों की ख़स्ता हालत का जायज़ा लिया जाए तो मालूम होगा कि कुरान की शिक्षाओं से मुसलमानों की जीवन यापन का वर्तमान तरीक़े का कोई जोड़ ही नहीं, कुरआन मजीद में इस बात की ताकीद की गयी है कि झूठ न बोलो, झूठ बोलने वाले पर खुदा की लानत होती है, मगर आज हम देखते हैं कि हर व्यक्ति आसानी से झूठ बोलता है, कुरआन मजीद का हुक्म है कि अपनी ज़बान की हिफ़ाज़त करो, ज़बान की हिफ़ाज़त आख़िरत में मग़्फ़िरत (मोक्ष) का साधन है, मगर आज हम देखते हैं कि इस बारे में भी हम सावधानी से काम नहीं लेते हैं। कुरआन मजीद का हुक्म है कि विरासत को शरीअत के अनुसार बांटो, बहनों को उनका हिस्सा दो, मगर आज हम देखते हैं कि बहुत से मुस्लिम घरानों में लड़ाई झगड़े की वजह विरासत का बंटवारा शरीअत के अनुसार न करना है, जबकि इस्लाम में विरासत के हुक्मों को इस सख़्ती के साथ बयान किया गया है कि शायद ही किसी दूसरे फ़र्ज़ के बारे में इतना सचेत किया गया हो। कुरआन मजीद में किसी भी एक फ़र्ज़ के सारे आदेशों का स्पष्ट वर्णन पूरे तौर पर एक जगह मिलना मुश्किल है, मगर विरासत का वर्णन एकलौता मसला ऐसा है उसकी सभी तफ़सीलों को खोल–खोलकर एक ही जगह बयान कर दिया गया है। इसी तरह कुरआन मजीद का हुक्म है कि मुसलमान आपस में लड़ाई न करें, झगड़ों से दूर रहें, मगर आज हम देखते हैं कि हमारी कमाइयों का ज़्यादातर हिस्सा अदालतों की नज़र हो जाता है, जबकि हदीस शरीफ़ में फ़रमाया गया कि आपस में लड़ाई उस्तरे की तरह है, जिस तरह उस्तरे से बाल मूंड दिये जाते हैं, उसी तरह आपस की लड़ाइयों से दीन ख़त्म हो जाता है। कुरआन मजीद में साफ़ तौर पर यह भी हुक्म दिया गया है कि आपस की लड़ाई में तुम्हारी कोई हैसियत बाक़ी नहीं रह जाएगी, अपमान व तिरस्कार तुम्हारा मुक़द्दर बन जाएगा, इसी तरह कुरआन मजीद का यह भी हुक्म है कि माल जमा करके न रखो, अल्लाह तआला जितना तुमको दे, उतना तुम उसकी राह में ख़र्च करो, अगर कोई ऐसा नहीं करता, बल्कि बैंक बैलेंस बनाता है, धन एकत्र करता है, और उसकी ज़कात अदा नहीं करता, उसके बारे में कठोर शब्द आए हैं कि ऐसे लोगों को दर्दनाक अज़ाब की खुशख़बरी दे दो। उनको यह बताओ कि उनको पहलुओं को क़यामत के रोज़ दाग़ा जाएगा। वे अल्लाह की रहमत के हरगिज़ पाने वाले नहीं होंगे। इसी तरह कुरआन मजीद का हुक्म है कि हम किसी से बदगुमानी न करें, क्योंकि कभी–कभी बदगुमानी बड़े–बड़े झगड़ों की वजह बन जाती है। इसी तरह कुरआन मजीद का हुक्म था कि हम अपने पड़ोसी की इज़्ज़त करें और उसके साथ अच्छा बर्ताव करें यहां तक कि अगर सफ़र में हमारे साथ कोई शख़्स बैठा है तो

उसको भी पड़ोसी बताया गया और कहा गया कि उसका भी ख़्याल रखना चाहिए, मगर आज हममें से बहुत कम लोग होंगे जो इन हुक्मों पर ग़ौर करके अपनी ज़िन्दगी का जायज़ा लें तो पता चलेगा कि हक़ीक़त में हम कुरान वाली ज़िन्दगी से बहुत दूर जा चुके हैं। यही वजह है कि आज कुरआन मजीद पर अमल न होने की वजह से अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर मुसलमानों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। कुरआन मजीद इस हक़ीक़त की तरफ़ पहले ही इशारा कर चुका है:

"और तुम जिस मुसीबत से दो–चार होते हो वह तुम्हारे हाथों की कमाई है और कितनी चीज़ें वह दरगुज़र कर जाता है।" (सूरह शूरा: 30)

सातवां हक़ "कुरआन की तब्लीग़" का है। मौजूदा हालात को देखते हुए ईमान वालों की ज़िम्मेदारी यह है कि वे पहले ख़ुद कुरआन मजीद से अपना संबंध ताज़ा करें, और जो लोग कुरआन की शिक्षा से कटकर दुनिया की बुराइयों में पड़े हैं उन्हें दोबारा जिलाएं, उन्हें "तुममें सबसे बेहतर शख़्स वह है जो कुरआन सीखे और सिखाए" सुनाएं और परेशान हाल दुनिया को उसकी हक़ीक़त से परिचित कराके वास्तविक शांति व सुकून अता करें। आज जिस तरह बाज़ारी लोगों की एक आवाज़ पर पूरी क़ौम ड्रामों, नुमाइशों, तफ़रीह, खेलों से आनन्दित होने के लिए निकल पड़ती है, ठीक उसी तरह या उससे भी ज़्यादा दिलचस्पी के साथ हमारी क़ौम कुरआन मजीद के हल्क़ों और उसकी निस्बत पर सजाई जाने वाली महफ़िलों में शामिल होने को सवाब का काम समझे। आज दीनी महफ़िलों की ओर लोगों का ध्यान न देना और रूचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि अभी वे दीन की हक़ीक़त को ही नहीं जानते हैं। लिहाज़ा ज़रूरत इस बात की है ज़हन में पैदा होने वाले बुरे माद्दे को दूर करने की कोशिश करें, अपने अमल व किरदार से कुरआन मजीद की शिक्षाओं को लोगों के सामने पेश करें, हमारी ज़िन्दगी ऐसी होनी चाहिए कि उसको देखकर लोगों के अन्दर एक शौक़ व जज़्बा पैदा हो। लोग हमें देखकर दूर ही से कहें कि यह नबी वाले लोग हैं। इनके अन्दर अख़लाक़ है। उनके यहां सामाज में रहने का तौर–तरीक़ा है। एक दूसरे से मुहब्बत है, ग़ैरों के साथ हमदर्दी है, यही वे चीज़ें हैं जिनसे यह बुलन्दियो पर बैठे हैं , याद रहे कि यदि अभी होश में न आए तो एक दिन वह आएगा कि अल्लाह तआला उन नेमतों को छीन लेगा और हमारी जगह एक ऐसी क़ौम लाएगा जो हम जैसी न होगी, क्योंकि अल्लाह तआला का क़ानून है कि वह ऐसी क़ौम को ज़्यादा देर तक ज़मीन में छूट नहीं देता , इतिहास के पन्ने गवाह हैं कि जब भी मुसलमानों ने ग़लत राह अपनायी, ईमानी अख़लाक़ से किनारा किया, तब उन्हें ज़िल्लत व रुस्वाई का सामना करना पड़ा। बग़दाद की ईंट से ईंट बजा दी गयी, वह उन्दुलुस जो कभी मुसलमानों का केन्द्र था, वहां भी इस्लामी मूल्यों को ऐसा रौंदा गया कि कलिमा पढ़ने वालों को मिटा दिया गया।

आज जब हर तरफ़ ईमान के सौदागर अपनी साज़िशी जाल बिछाए हुए हैं, इन हालात में ईमान वालों की ज़िम्मेदारी और बढ़ जाती है कि हम अपने हालात का जायज़ा लें, हमारी ज़िन्दगियों मं ईमान की जो चमक ख़त्म हो रही है उसको ताज़ा करें। रस्मों और अनावश्यक कामों में उलझ कर अपने समय को नष्ट करना इन संगीन हालात में कोई समझदारी की बात नहीं। अगर हमारी ज़िन्दगी की रफ़्तार यही रही तो याद रहे कि हम न कभी इस दुनिया में इज़्ज़त पा सकते हैं और न आख़िरत में इज़्ज़त पा सकते हैं। यह अल्लाह के कलाम के हक़ हैं, अगर इनको अदा किया गया तो अल्लाह की रहमत बारिश की तरह से बरसेगी और अल्लाह की ऐसी मदद आएगी कि उसकी तरफ़ ख़्याल भी न गया होगा। ज़रूरत इस बात की है कि हम कुरआन पाक की अहमियत को समझें और उसके हक़ को अदा करें।

कुरआन कहता है:

"ऐ लोगो! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हारी क़ौम और क़बीले बनाए ताकि एक–दूसरे को पहचानो और ख़ुदा के नज़दीक तुममें ज़्यादा इज़्ज़तवाला वह है, जो ज़्यादा परहेज़गार है, बेशक ख़ुदा सबकुछ जानने वाला और सबसे ख़बरदार है।"

सुन्नत-ए-ग़ैर मुअक्कदा और नवाफ़िल

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्कदा उन सुन्नतों को कहते हैं जिनकी फ़ज़ीलत रसूलुल्लाह (स0अ0) के क़ौल (कथन) से साबित हो या जिनका करना मनकूल (रसूलुल्लाह स0अ0 से नक़ल किया गया) हो लेकिन इस पर पाबन्दी करना साबित न हो। इनको मुस्तहब भी कहा जा सकता है और नफ़िल में तो तमाम सुन्नत शामिल हैं चाहे मुअक्कदा हों या ग़ैर मुअक्कदा। रोज़ाना नमाज़ों के आगे–पीछे पढ़ी जाने वाली हों या फ़र्ज़ नमाज़ों से अलग हों या किसी ख़ास मौक़े पर मशरूअ हों। इनको पढ़ने से सवाब मिलता है और न पढ़ने से कोई गुनाह, मलामत या अताब नहीं होता। (शामी)

फ़र्ज़ नमाज़ों के साथ पढ़ी जाने वाली सुन्नत ग़ैर मुअक्कदा

फ़र्ज़ नमाज़ों के साथ पढ़ी जाने वाली सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्कदा निम्नलिखित हैं:

1– ज़ोहर के बाद दो रकआत सुन्नत–ए–मुअक्कदा के बाद दो रकआत।

2– मग़रिब के बाद छः रकआत।

3– अस्र से पहले दो या चार रकआत।

4– इशा से पहले दो या चार रकआत।

5– इशा के बाद चार रकआत। (शामी / हिन्दिया)

जहां तक ज़ुहर की दो रकआत सुन्नत–ए–मुअक्कदा के बाद वाली दो रकआत नफ़िल या ग़ैर मुअक्कदा का संबंध है तो हज़रत उम्मे हबीबा (रज़ि0) फ़रमाती हैं कि नबी करीम (स0अ0) ने फ़रमाया:

"जो ज़ुहर से पहले चार रकआत और ज़ुहर के बाद चार रकआत पढ़ेगा अल्लाह तआला उसको जहन्नम पर हराम कर देगा।" (अबूदाऊद, तिरमिज़ी, मुसनद अहमद)

और हज़रत अली (रज़ि0) से रिवायत है:

"रसूलुल्लाह (स0अ0) अस्र से पहले दो रकआत पढ़ते थे।" (अबूदाऊद)

मग़रिब की फ़र्ज़ से पहले सुन्नत

शवाफ़े (शाफ़ई मसलक) के यहां मग़रिब की फ़र्ज़ से पहले दो रकआत पढ़ना सुन्नत है। इसलिए कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मुग़फ़िल की मुत्तफ़िक़ अलैह रिवायत में इसका ज़िक्र है। इसके अलावा भी कई रिवायतों में ज़िक्र है। अहनाफ़ (हनफ़ी मसलक) में से कई हज़रात ने इसको मकरूह क़रार दिया है। लेकिन सही बात यह है कि अगर मग़रिब की अज़ान के बाद अगर फ़र्ज़ नमाज़ की शुरूआत किसी जगह कुछ देर से होती हो जैसा कि हरमैन–शरीफ़ैन, देहली की मरकज़ वाली मस्जिद और बहुत सी दूसरी जगहों पर इसका मामूल (नियम) है तो इन हदीसों को देखते हुए इनका पढ़ना जाएज़ रहेगा, मकरूह नहीं कहा जा सकता। यद्यपि खुद रसुलूल्लाह (स0अ0) और बड़े–बड़े सहाबा का अमल न होने की वजह से ज़्यादा मुनासिब यही है कि इसका मामूल न बनाया जाए। उलमा–ए–अहनाफ़ में से इब्ने आबिद बिन शामी ने कई शेख़ों के हवाले से इसकी अबाहत और जवाज़ की बात नक़ल की है। (शामी)

मग़रिब के बाद सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्कदा

सुन्नत–ए–मुअक्कदा की बहस में साफ़ किया जा चुका है कि मग़रिब की फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दो रकआत सुन्नत–ए–मुअक्कदा हैं। इन दो रकआत के बाद कुछ रकआत सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्कदा भी हैं। फ़ुक़्हा ने इनकी तादाद छः रकआत लिखी है। तिरमिज़ी में हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि0). की रिवायत में है कि यह छः रकआत बारह साल की इबादत के बराबर गिनी जाती हैं, लेकिन तिरमिज़ी ने इस हदीस को ज़ईफ़ बताया है। तिरमिज़ी ही में हज़रत आयशा (रज़ि0) की रिवायत में बीस रकआत का ज़िक्र है। फिर फ़ुक़्हा ने यह भी बहस की है

कि इन दो रकआत के अलावा और छः रकआत पढ़े। (शामी)

लोगों का आम तौर से मामूल यह है कि मग़रिब की फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दो रकआत सुन्नत–ए–मुअक्कदा पढ़ते हैं, उसके बाद दो रकआत नफ़िल पढ़ते हैं। फ़कीह किताबों में इसका ज़िक्र नहीं मिलता लेकिन मिशकात में हज़रत मकहूल से मुरसिला एक रिवायत नक़ल की गयी है कि:

नबी करीम (स0अ0) ने फ़रमाया जो शख़्स मग़रिब के बाद बात करने से पहले दो रकआत और एक रिवायत में है कि चार रकआत पढ़े तो उसकी नमाज़ इल्लीन को पहुंचा दी जाएगी।

इस रिवायत से मालूम होता है कि लोगों का जो आम मामूल है उसकी बहरहाल दलील मौजूद है।

इशा से पहले

इशा से पहले भी चार रकआत या दो रकआत पढ़ना सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्कदा है। (शामी)

दो रकआत का सुबूत इस हदीस से होता है जिसमें रसूलुल्लाह (स0अ0) ने फ़रमाया "हर अज़ान व अक़ामत के बीच नमाज़ है और तीसरी बार फ़रमाया: जो चाहे।" (बुख़ारी, मुस्लिम)

और इब्ने हब्बान व मुस्लिम ने फ़रमाया हर फ़र्ज़ नमाज़ से पहले दो रकआत मशरूअ हैं। जहां तक इशा से पहले चार रकआत सुन्नतों का ताल्लुक़ है तो उसका ज़िक्र हदीसों में नहीं है। ज़ुहर पर क़यास करके चार रकआत की बात कही गयी है। (बदाए)

इशा के बाद

इशा की फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दो रकआत सुन्नत मुअक्कदा हैं, जिसको ज़िक्र हम कर चुके हैं। इन दो रकआत के बाद चार रकआत सुन्नत–ए–ग़ैर मुअक्कदा हैं। इस तरह यह छः रकआत हो जाएगी और अगर कोई चाहे तो दो रकआत मुअक्कदा को भी चार नहीं गिने, तो इस तरह चार रकआत हो जाएगी। (शामी)

इसीलिए हज़रत आयशा (रज़ि0) से रिवायत है कि नबी करीम (स0अ0) जब भी इशा पढ़कर मेरे पास आते थे तो चार रकआत या छः रकआत पढ़ते थे। (अबूदाऊद)

वित्र के बाद

वित्र की नमाज़ के बाद आम मामूल यह है कि लोग दो रकआत नफ़िल पढ़ते हैं। फ़ुक़्हा व फ़तावे की किताबों में इनका ज़िक्र नहीं मिलता। अलबत्ता बहुत सी हदीसों में इनका ज़िक्र मिलता है। इसीलिए हज़रत अबू सलमा (रज़ि0) फ़रमाते हैं मैंने हज़रत आयशा (रज़ि0) नबी–ए–करीम (स0अ0) की नमाज़ों के बारे में पूछा तो हज़रत आयशा (रज़ि0) ने फ़रमाया कि आप (स0अ0) आठ रकआत पढ़ते थे फिर जब रुकूअ का इरादा होता तो खड़े होकर रुकूअ करते थे, फिर फ़ज्र की अज़ान और अक़ामत के दौरान दो रकआत सुन्नत–ए–फ़ज्र पढ़ते थे। (मुस्लिम)

तिरमिज़ी में हज़रत उम्मे सलमा (रज़ि0) से भी इस तरह की रिवायत है लेकिन मुस्लिम शरीफ़ ही में यह रिवायत भी है कि रात की आख़िरी नमाज़ को वित्र बनाओ। (मुस्लिम)

मौलाना रशीद अहमद लुधयानवी दोनों में ततबीक़ देते हुए फ़रमाते हैं कि मुस्तहब और अफ़ज़ल यह है कि जितने नवाफ़िल पढ़ना चाहिए वित्र से पहले पढ़ लें और वित्र आख़िर में पढ़े इसके बाद नवाफ़िल न पढ़ें, अगर पढ़ लें तो मुबाह है। मगर न तो दो रकआत की तख़्सीस (विशेष) है और न ही इन नवाफ़िल का वित्र के साथ कोई ताल्लुक है बल्कि आम औक़ात–ए–मुबाहा की तरह जितने नवाफ़िल चाहिए पढ़िए। (अहसनुल फ़तावा)

जहां तक वित्र के बाद बैठ कर पढ़ने का ताल्लुक़ है तो रसूलुल्लाह (स0अ0) ने इस तरह किया था। इसलिए आपकी इत्तेबा करते हुए ऐसा कर सकता है। लेकिन ख़्याल रहे कि कई हदीसों में साफ़ है कि नफ़िल बैठ कर पढ़ने से आधा सवाब मिलता है।

और रसूलुल्लाह (स0अ0) को बैठकर पढ़ने से भी पूरा सवाब मिलता था। यानि इस मामले में आपके लिए अलग और ख़ास इजाज़त थी। इसकी सराहत मौजूद है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) से रिवायत है कि मैंने नबी करीम (स0अ0) को बैठ कर नमाज़ पढ़ते हुए देखा तो मैंने अर्ज़ किया, आपने बयान फ़रमाया था कि बैठकर पढ़ने वाले को खड़े होकर पढ़ने वाले के मुक़ाबले आधा सवाब मिलता है और आप बैठकर नमाज़

पढ़ रहे हैं, फ़रमाया, हां लेकिन मैं तुममें से किसी की तरह नहीं हूं। (मुस्लिम, नसाई)

नवाफ़िल के बहुत से अहम मसले

1– जिस नफ़िल नमाज़ को शुरू कर दिया हो उसका पूरा करना लाज़िम हो जाता है। लिहाज़ा अगर किसी वजह से नमाज़ टूट जाए तो अब उसकी कज़ा करनी होगी। लेकिन कज़ा सिर्फ़ दो रकआत की करनी होगी चाहे चार रकआत की नियत बांधी हो। इसी तरह अगर औरत ने नमाज़ शुरू की, और उसी बीच उसे हैज़ (माहवारी) आ गया तो नमाज़ से बाहर निकल आए और हैज़ से पाक होने के बाद दो रकआत नमाज़ की क़ज़ा करे, इसी तरह मकरूह वक़्त में नफ़िल पढ़ना मकरूह है, किसी ने शुरू कर दिया हो तो उसको चाहिए कि तोड़ दे, बाद में क़ज़ा कर ले, फिर भी अगर पूरी कर ले तो गुनाह होगा लेकिन कराहत के साथ नमाज़ हो जाएगी। (शामी)

2– फ़र्ज के बाद अफ़ज़ल यह है कि सिर्फ़ इतनी देर तक बैठे जितनी देर में "अल्लाहुम्मा अनतस्सलाम व मिनकस्सलाम तबारकता या ज़लजलालि वल इकराम" पढ़ सके, उसके बाद वाली सुन्नतों में बिला वजह देर नहीं करनी चाहिए। इसीलिए मुस्लिम और तिरमिज़ी में हज़रत आयशा (रज़ि0) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स0अ0) सिर्फ़ "अल्लाहुम्मा अनतस्सलाम व मिनकस्सलाम तबारकता या ज़लजलालि वल इकराम" के बाद बैठते थे, रहे वे वज़ीफ़े जिनको फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद पढ़ने का ज़िक्र है तो उनको सुन्नत व नवाफ़िल से फ़ारिग़ होकर पढ़िएगा तो फ़र्ज़ के बाद ही पढ़ना माना जाएगा। अलबत्ता अगर कोई फ़र्ज़ के फ़ौरन बाद दुआ पढ़े और सुन्नत व नवाफ़िल उसके बाद पढ़े तो उसमें भी कोई हर्ज नहीं है। (शामी)

3– इमाम के लिए बेहतर यह है कि अगर आसानी से हो सके तो फ़र्ज़ पढ़ने के बाद नवाफ़िल उस जगह से हट कर पढ़े। उसी जगह पढ़ना मकरूह तन्ज़ीही है। इल्ला यह कि अज़दहाम की वजह से हटना मुश्किल हो। जहां तक मुक़्तदी या अकेले पढ़ने का ताल्लुक़ है तो यह दोनों उसी जगह नमाज़ पढ़ सकते हैं। लेकिन ज़्यादा बेहतर यह है कि वे भी जगह बदल लें। अबूदाऊद की एक रिवायत में इमाम के लिए जगह बदलने का ज़िक्र आया है और उसकी हिकमत बज़ाहिर यह है कि बाद में आने वालों को पता चल जाए कि नमाज़ हो चुकी है। (शामी)

4– ज़ुहर और जुमा से पहले वाली चार रकआत सुन्नत–ए–मुअक्कदा फ़राएज़ से मुशाबह हैं, अतः पहले क़ादा में सिर्फ़ अत्तहियात पढ़े, अगर भूले से दरूद शरीफ़ पढ़ दिया तो सज्दा सहू लाज़िम हो जाएगा। इसी तरह तीसरी रकआत में सना नहीं पढ़ेगा। इसके अलावा बक़िया सुन्नत व नफ़िल में हर दो रकआत मुस्तक़िल हैसियत रखती हैं लिहाज़ा पहली बैठक में दरूद शरीफ़ पढ़ने से न सिर्फ़ यह कि सज्दा सहू लाज़िम नहीं बल्कि फ़ुक़्हा ने पढ़ने को बेहतर क़रार दिया है इस तरह इन नमाज़ों की तीसरी रकआत में सना पढ़ लेना भी बेहतर है। (शामी)

5– हर तरह की सुन्नत व नफ़िल का घर में पढ़ना अफ़ज़ल क़रार दिया गया है। हदीस में इसी का हुक्म आया है, लेकिन आजकल ख़तरा यह होता है कि घर में कहीं छूट ही न जाएं। इस तरह का ख़ौफ़ हो तो फिर बेहतर यह है कि मस्जिद में ही पढ़ लिया जाए। इस हुक्म से तरावीह अलग है। इसीलिए इसका मस्जिद ही में पढ़ना अफ़ज़ल है। (शामी)

हदीस–ए–नबवी:

अल्लाह के रसूल (स0अ0) फ़रमाते हैं: साफ़ सुन लो मुझे क़ुरआन शरीफ़ और उसी की तरह (हदीस) अता की गयी है। सुन लो कि क़रीब है कि एक ज़माना ऐसा आएगा जिसमें आदमी पेट भर कर अपनी मसेहरी पर टेक लगाए हुए होगा और उसका यह दावा होगा कि तुम्हारे लिए यही क़ुरआन काफ़ी है। इसमें तुम जो चीज़ हलाल पाओ, बस उसी को हलाल जानो, और जो चीज़ हराम पाओ उसी को हराम जानो, सुन लो तुम्हारे लिए पालतू गधे का गोश्त जायज़ नही है और न ही हर दांत वाला दरिन्दा और न उस शख़्स का गिरा–पड़ा सामान उठाना ठीक है जिससे वादा ले लिया गया हो, इल्ला यह कि वह उससे बेनियाज़ हो और जो किसी के यहां मेहमान बने तो वहां के लोगों पर उसकी ज़ियाफ़त (आवभगत) ज़रूरी है, अगर वे लोग ऐसा न करें तो उसी के बराबर सज़ा भी दी जानी चाहिए।

अल्लाह पर ईमान

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

हदीसः हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि0) से रिवायत है कि आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः "ईमान के साठ से भी ज़्यादा हिस्से हैं, इनमें सबसे अफ़ज़ल "लाइलाहा इल्लल्लाह" का क़ायल होना है।"

फ़ायदाः "तौहीद का अक़ीदा" दीन–ए–इस्लाम की बुनियाद है, यही कारण है कि किसी ईमान वाले का ईमान उस समय तक कुबूल नहीं होता जब तक कि वे दिल से अल्लाह तआला की वहदानियत (एकेश्वरवाद) को स्वीकार न करे और ज़बान से इसका इक़रार न करे। यह दीन–ए–इस्लाम ही की विशेषता है कि उसकी सभी शिक्षाओं में तौहीद का अक़ीदा साफ़ तौर पर नज़र आता है और वह तौहीद के अक़ीदे को इस तौर पर भी स्पष्ट करता है अल्लाह को मानने, उस पर ईमान रखने का मतलब केवल यह नहीं है कि उसने आसमान व ज़मीन को बनाया, वही सभी प्राणियों का पैदा करने वाला है, बल्कि इस पर ईमान लाने का मतलब यह भी है कि उसके सिवा इस कायनात (संसार) की व्यवस्था चलाने वाला कोई दूसरा नहीं है, न ही उसके सिवा इबादत के लायक़ कोई ज़ात है। वह अकेला है एवं उसका कोई साझी नहीं है। सभी प्राणियों से बेनियाज़ है। न उसकी कोई औलाद है, न वह किसी की औलाद हैं। अज़्ल से अब्द तक, बेमिस्ल व बेमिसाल है। आसमान व ज़मीन को बनाने के बाद उसकी व्यवस्था को चलाना भी उसी के अधिकार में है। रोज़ी का मालिक भी वही है, बीमारियों का ठीक करने वाला भी वही है, मौत व ज़िन्दगी का मालिक भी वही है, मुसीबतों से नजात देने वाला भी वही है, उसके अतिरिक्त कोई ऐसी ज़ात नहीं जो इबादत के लायक़ हो।

दीन–ए–इस्लाम में आमाल (कर्म) के कुबूल होने का दारोमदार इसी तौहीद के अक़ीदे (एकेश्वरवाद की आस्था) से संबंधित है। अगर तौहीद के इसी बुनियादी अक़ीदे में कमी हो, तो फिर अच्छे से अच्छा काम भी आख़िरत में कोई फ़ायदा नहीं देने वाला। यही कारण है कि इस्लामी शरीअत में तौहीद के अक़ीदे को बहुत ही स्पष्ट रूप से बयान किया गया है। उपरोक्त हदीस से भी यही बात साबित होती है कि ईमान के सभी हिस्से में सबसे ज़्यादा अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) कलिमा–ए–तौहीद का क़ायल होना है। इसका कारण यही है कि जब इंसान के दिल में तौहीद के कलिमे की हक़ीक़त बसी जाएगी, तभी दूसरे ईमानी कामों को कुबूलियत की सनद हासिल होगी और मानवीय समाज में उसको श्रेष्ठ स्थान भी प्राप्त होगा। इसलिए कि अल्लाह तआला की ज़ात से सही तौर पर जुड़ने के बाद दुनिया की सभी ताक़ते और साधन उसकी निगाहों में कमतर होंगे। उसके सामने उस मालिक का ख़्याल होगा जो बादशाहों का बादशाह और ज़मीन व आसमान का मालिक है, इज़्ज़त व ज़िल्लत उसी के हाथ में है।

असहाब–ए–किराम (सहचरों) को तौहीद के कलिमे की इसी हक़ीक़त का हिस्सा–ए–वाफ़िर नसीब हुआ था। जिसका नतीजा यह था कि उनकी निगाहों में उस वक़्त की सुपर पॉवर ताक़तें भी गर्द थीं। रिवायत से मालूम होता है कि वे बिना किसी झिझक शाही दरबारों में जाकर तौहीद के अक़ीदे की आवाज़ लगाते थे। यही वजह है कि एक छोटी से जमाअत के द्वारा एक छोटी सी मुद्दत में दुनिया के एक बड़े हिस्से में दीन के प्रचार का काम लिया और लोगों को राह–ए–हक़ नसीब हुई। मगर अफ़सोस की बात है कि आज जबकि इस्लाम को क़रीब साढ़े चौदह सौ साल हो रहे हैं, पूरी दुनिया में तौहीद के कलिमे के क़ायल मौजूद हैं। दीनी ख़िदमत अंजाम देने की अलग–अलग शक्लों का सिलसिला भी शायद उससे कहीं बढ़ा हुआ है जो शुरू ज़माने में था। उन सभी चीज़ों के बावजूद कलिमा पढ़ने वाले जिस समाज में जीवन यापन करते हैं, उस समाज तक कलिमे की वास्तविक तस्वीर पेश करना तो दूर की बात है, इस बारे में जो ग़लतफ़हमियां पैदा हो गयीं हैं, उनको दूर करने में भी असमर्थ नज़र आते हैं, केवल इसकी सूरत बाक़ी रह गयी है। अतः ज़रूरत इस बात की है कि सभी ईमान वाले तौहीद के कलिमे की ज़ाहिरी सूरत के साथ–साथ उसकी हक़ीक़त और याचनाओं को भी अपनाएं और अपनी ज़बान के साथ अपने कर्म से भी यह गवाही दें कि अस्ल काम बनाने वाला वही अल्लाह है जिसके क़ब्ज़े में संसार की समस्त व्यवस्था है। वह अपनी ज़ात व सिफ़ात में अकेला है। ज़ाहिरी तौर पर नज़र आने वाली ताक़तवर चीज़ें भी उसी के अधीन हैं।

म्यांमार के मुसलमान एक पीड़ित समुदाय

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

पूर्वी एशिया के दक्षिण में ढाई लाख वर्ग मील के क्षेत्र में आबाद देश बर्मा (म्यांमार) कहलाता है, जिसकी राजधानी रंगून है। बर्मा की गिनती दुनिया के सबसे ग़रीब देशों में होती है। 1996 ई0 इसका सरकारी नाम बदल दिया गया और अब यह देश "म्यांमार" के नाम से जाना जाता है। एक अनुमान के अनुसार इस देश की आबादी लगभग 7 करोड़ है जिनमें अधिकांश जनसंख्या "गौतम बुद्ध" के मानने वाले बुद्धिष्टों की है। म्यांमार की पूरी आबादी 14 अलग–अलग राज्यों में फैली हुई है और उन राज्यों में एक महत्वपूर्ण और बड़ा राज्य "अराकान" है, जहां अधिकांश संख्या मुसलमानों की है और इस राज्य का सरकारी नाम "राखीन" है।

किसी ज़माने में अराकान पूरी तरह से आज़ाद एक इस्लामी राज्य था लेकिन इसकी इस्लामप्रियता म्यांमार के बुद्धिष्टों को ज़रा भी भाती थी अतः 1784 ई0 में म्यांमार के राजा "बोराबारनी" ने अराकान पर हमला कर दिया, उसकी ईंट से ईंट बजा दी और उसे अपने देश में शामिल कर लिया। यही वह आरम्भिक बिन्दु था मुसलमानो के पीड़ित होने का, उनकी बेबसी का।

1824 ई0 में म्यांमार अंग्रेज़ों की गुलामी में चला गया। मुसलमानों ने इस गुलामी के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई जिसके परिणाम में 1845 में "बर्मा मुस्लिम कांग्रेस" (बी.एम.सी.) के नाम से एक पार्टी अस्तित्व में आई। इस प्लेटफ़ार्म से आज़ीद की ज़ोर–शोर से मुहिम चलाई गई। यद्यपि 1955 ई0 में सरकारी तौर पर मुसलमानों की इस पार्टी को समाप्त कर दिया गया, फिर भी इस बात से इनकार नहीं कि बर्मा की आज़ादी में इस पार्टी ने अपना अमूल्य योगदान व कुर्बानी दी है।

सौ साल से अधिक समय तक पूरा बर्मा (म्यांमार) अंग्रेज़ों का गुलाम था, अन्त में मुसलमान और बर्मा (म्यांमार) के लोगों की कुर्बानियों और प्रयासों के परिणाम में 1948 ई0 में बर्मा (म्यांमार) को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, लेकिन साथ ही अंग्रेज़ों और बुद्धिष्टों की मिलीभगत से बर्मा (म्यांमार) को "बुद्धिष्ट राष्ट" घोषित कर दिया गया।

'अराकान' नामक राज्य बंग्लादेश के समुद्री तट पर बसे शहर "चटगाँव" से मिला हुआ है और वह मुस्लिम देश भी है, इसलिए अराकान के मुसलमानों ने अपनी यह इच्छा प्रकट की कि उन्हें पश्चिमी पाकिस्तान का हिस्सा बना दिया जाए। लेकिन अंग्रेज़ शासक और बर्मा (म्यांमार) के बुद्धिष्ट सामने आए और किसी भी स्थिति में यह बात संभव न होने दी, अपितु बर्मा (म्यांमार) की आज़ादी के बाद बुद्धिष्टों ने सबसे पहले अराकान से "मुस्लिम मिटाओ" पॉलिसी अपनाई और उस पर सख़्ती से कार्यवाही शुरू की।

अराकान का क्षेत्र दूसरे राज्यों के मुक़ाबले अधिक ख़ुशहाल था, विशेषतयः चावल की पैदावार के कारण से दूसरे क्षेत्रों पर उसे वरीयता प्राप्त थी। इसीलिए बर्मा (म्यांमार) की सरकार अरकान राज्य को आज़ाद छोड़ देने या बंग्लादेश में शामिल हो जाने के पक्ष में कदापि नहीं थी, बल्कि उसने यह कोशिश शुरू की कि अरकान से मुसलमानों का सफ़ाया करके उसे पूरे तौर पर "बौद्ध क्षेत्र" बना लिया जाए। इस उद्देश्य के अन्तर्गत अराकान को स्वतन्त्रा से पहले ही निशाना बनाया जाता रहा और आज़ादी के बाद इस प्रकार की कार्यवाहियां और तेज़ व कठोर हो गईं। धीरे–धीरे मुसलमानों को नौकरियां से हटाया गया, उनकी सम्पत्तियों पर क़ब्ज़ा किया गया, उसके बाद व्यापार पर रोक लगाई गई और उनकी उन्नति के सभी रास्तों को बन्द कर दिया गया।

1941 ई0 में अराकान राज्य के ज़िला अकयाब में बुद्धिष्टों ने "थाकन" नामक एक कट्टरवादी संस्था की आधारशिला रखी। उसका कट्टरपंथी नेता "अजूखाएं" था। उसने सर्वप्रथम क्षेत्रीय बुद्धिष्टों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ ख़ूब भड़काया, फिर उन्हें हथियार उपलब्ध कराए और फिर उसके इशारे पर 26 मार्च 1942 ई0 को अराकान के ज़िला 'रखाएन' में बसने वाले 'रोहन्गियां मुसलमानों' के नरसंहार का आरम्भ हुआ। यह क्रम लगभग तीन महीनों तक चलता रहा, जिसमें एक रिपोर्ट के अनुसार लगभग एक लाख मुसलमानों को शहीद किया गया, जबकि कई लाख मुसलमान बेघर व बेसहारा हो गए।

इसके बाद 1950 ई0 में दूसरी बार रखाएन के मुसलमानों पर दोबारा क़यामत टूटी और बहुत बड़े स्तर पर बर्बरियत व वहशीपन का नंगा नाच किया गया, घरों को जलाया गया, इज़्ज़तों को लूटा गया और मर्दों को

विभिन्न प्रकार की यातनाएं देकर उनकी हत्या की गई।

1962 ई0 में "जनरल नी वन" का समय आरम्भ हुआ और पूरा देश सैन्य शासन के अधीन हो गया। यह मुसलमानों के सकंट की नई शुरूआत थी जो पहले से कहीं अधिक संगीन और भयावह थी। बर्मा (म्यांमार) में सैन्य शासन स्थापित हो गया। मुसलमानों को विद्रोही क़ौम (समुदाय) घोषित कर दिया गया। उन्हें सेना से पूरी तरह से बाहर कर दिया गया और फिर मस्जिदों और मदरसों पर पूरी तरह से पाबन्दी लगा दी गई।

1967 ई0 में बर्मा (म्यांमार) की सरकार ने विभिन्न प्रकार के आर्थिक नियम व क़ानून लागू किये, ज़मीनें, कारोबार और निजी व्यापार को राष्ट्रीय पूंजी/सम्पत्ति घोषित कर दिया गया, मार्केट और दुकानें समाप्त कर दी गईं, किसानों से जानवर छीन लिए गए, राशन की ज़बरदस्त क़िल्लत के कारण भुखमरी फैल गई और केवल अराकान में लगभग 25 हज़ार मुसलमानों की भूख के कारण मृत्यु हो गई।

मई 1973 ई0 में बर्मा (म्यांमार) की सेना ने 28 बेगुनाह मुसलमानों को गोलियों का निशाना बनाया। उसके बाद दिसम्बर 1974 ई0 में बर्मा (म्यांमार) की सेना ने लगभगर 200 परिवारों को नाव में बिठाकर एक टापू पर छोड़ दिया जहां कुछ दिनों की चीख़–पुकार के बाद सबके–सब मर गए।

1978 ई0 में सैन्य शासन ने ख़ूनी आपरेशन की शुरूआत की और एक लाख के क़रीब मुसलमानों को मौत के घाट उतार दिया गया, कई लाख अपने घरों से निकाल दिये गए। 1982 ई0 तक मुसलमानों के नरसंहार का यह क्रम जारी रहा। लगभग एक लाख पच्चीस हज़ार मुसलमानों को बुद्ध मत का अनुसरण करने वाला बनाया गया, जिन्होंने इनकार किया उन्होंने पलायन करने पर मजबूर किया गया। इस प्रकार करीब पांच लाख मुसलमानों ने पलायन किया। अधिकांश ने बंग्लादेश में पनाह ली और एक बड़ी संख्या ने मक्का मुअज़्ज़मा ने शरण ली। जो लोग पलायन न कर सके उनकी नाकाबंदी शुरू कर दी गई। इस्लामी कार्यवाहियों पर पाबन्दी लगा दी गई। वक़्फ़ की सम्पत्तियों को चारागाहों में बदल दिया गया। मस्जिदों व मदरसों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया और इस प्रकार वे अपने देश में अजनबी होकर रह गए।

1991 ई0 में फिर मुसलमानों को निशाना बनाया गया। बहुत सी मस्जिदों को आग के हवाले किया गया, अधिकांश संख्या में क़ुरआन के नुस्ख़ों को फाड़कर आग लगा दी गई। दुकानों को लूट लिया गया। लाशों पर लाशें बिछा दी गईं और अराकान की सड़कें मुसलमानों के ख़ून से लाल हो गईं।

15 मई 2001 ई0 को बुद्धिष्टों ने एक बार फिर मुसलमानों को निशाना बनाया। ग्यारह मस्जिदें गिरा दी गईं, चार सौ से ज़्यादा घरों को आग लगा दी गई और दो सौ लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया जिनमें से बीस लोग वे थे जो मस्जिद में नमाज़ पढ़ रहे थे, उन्हें इतना मारा गया कि वे जान की बाज़ी हार गए। बुद्धिष्टों की मांग थी कि मुसलमानों की मस्जिदों को गिरा दिया जाए जिसे सरकार ने सभी नियमों को ताक़ पर रखते हुए स्वीकृति दे दी और एक बड़ी संख्या ने वहां से पलायन किया। आज लाखों की संख्या में बर्मा (म्यांमार) के मुसलमान थाईलैण्ड और बंग्लादेश की सीमाओं पर कैम्पों में जीवन यापन कर रहे हैं।

पिछले पैसठ सालों से अराकान के मुसलमान ज़ुल्म की इस चक्की में पिस रहे हैं। उनके बच्चे नंगे पैर, नंगे बदन, फटे–पुराने कपड़े पहने दयनीय स्थिति में दिखाई देते हैं। औरतें मर्दों के साथ खेतों में काम करती हैं और उनके घर भी उजड़े हुए हैं।

ऐसी आत्मा को विचलित कर देने वाली व गंभीर परिस्थिति में ख़ुशी की बात यह है कि अराकान के मुसलमानों ने अपने धर्म का कभी सौदा नहीं किया। एक भी ख़बर ऐसी नहीं मिली मुसलमान ने अपनी जान व माल के डर से इस्लाम को छोड़कर बौद्ध धर्म को स्वीकार किया हो।

जबकि दूसरी ओर ग़ौरतलब बात यह है कि बौद्ध धर्म के "महात्मा बुद्ध" के बारे में प्रसिद्ध है कि वे अमन व शांति के दूत थे। हिसंक जीवन से बिल्कुल दूर थे। घर–घर भीख मांगकर मन के विपरीत कर्म की शिक्षा देते थे और उनके जीवन का सार ही भाई–चारा व इन्सानी हमदर्दी था, लेकिन इस महान व्यक्ति को मानने वाला यह बौद्ध समुदाय आज इतना अत्याचारी व हिंसक क्यों हो गया है? किस प्लानिंग के तहत बुद्धिष्टों की विचारधारा को परागन्धित किया गया और किस प्रकार उनके दिमाग़ में मुसलमानों के प्रति नफ़रत के बीज बोए गए?वास्तविकता तो यह है कि सही–सही आज तक उसके राजनीतिक व धार्मिक कारणों को ज्ञात न किया जा सका और न ही उसके हल का गंभीरता से प्रयास किया गया!

ख़ाक व ख़ून का मन्ज़र

अबुल अब्बास ख़ाँ

वह कैसा पीड़ादायक दृश्य था जब हल्ब (एलेप्पो) में हज़ारों बेसहारा मुसलमान नंगे सर, नंगे पैर, नम आंखों व ग़म में डूबे हुए दिल के साथ अपने घर से बेघर हो रहे थे। ज़िन्दगी से मायूस जिन्दगी की तलाश में निकल रहे थे। इज़्ज़ते मिट चुकी हैं, दौलत लुट चुकी है, सहारे छिन चुके हैं, आंखे शुष्क, होंट ख़ामोश, भविष्य अंधकारमय! बच्चे बिलक रहे थे, औरतें सिसक रहीं थीं, मर्द तड़प रहे थे और बूढ़े....उफ़! आत्मा को विचलित कर देने वाला दृश्य था। इस्लाम के नाम पर बना हुआ देश, इस्लाम ही को मिटाने पर उतारू। उत्पीड़ा व असहायता, लाचारी व बेबसी का एक हृदयविदारक दृश्य!

यह प्रभावपूर्ण दृश्य अभी समाप्त भी न हुआ था कि हल्ब (एलेप्पो) के शांत वातावरण में गड़गड़ाहट की आवाज़ गूंज उठी, आसमान से क़हर बरसने लगा, घन–गरज के साथ लड़ाकू विमान मिज़ाइल गिराते हुए गुज़रे, पूरे वातावरण पर बारूद की चादर छा गई, और फिर.....फिर बिल्कुल सन्नाटा, गहरी ख़ामोशी, दूर–दूर तक कोई आवाज़ नहीं, क़दम जम से गए, सांसे अटक सी गईं, संसार रुक सा गया, कुछ क्षणों के लिए दिन–रात की गर्दिश थम सी गई, होश क़ाबू से बाहर थे कि यकायक ज़ोरदार चीख़ों, आहों और सिसकियों से बारूदी पर्दा तार–तार हो गया, शांत वातावरण तड़ाक सा हो गया, उफ़! ख़ुदाया! किस क़दर हौलनाक दृश्य है; ख़ाक व ख़ून में तड़पती हुई लाशें, ख़ून के फ़व्वारे, बिखरे हुए अंग, उफ़! देखो! किसी का हाथ कटा है, किसी का सर फटा है, किसी का धड़ जुदा है, किसी की जान हलक़ में फ़ंसी है, किसी का ख़ून नहीं रुक रहा, किसी की सांस नहीं रुक रही, किसी का दर्द नहीं मिट रहा, किसी की चीख़ नहीं निकल रही! ख़ाक व ख़ून में लिपटा हुआ यह दृश्य किसी क़यामत से कम नहीं!

हां यह हल्ब (एलेप्पो) है! जहां ज़िन्दगी की जगह मौत, ऐश व सलामती की जगह परेशानी व बेचैनी, गाने–बजाने की जगह शोर व मातम, जीवन रूपी पेय की जगह रक्तरंजित समन्दर, बस्तियों की जगह क़ब्रें और बाज़ारों की चहल–पहल की जगह मौत का तांडव!

हां–हां! यही हल्ब (एलेप्पो) है! एक ऐसी धरती जो मुसलमानों के ख़ून से है, जिसका माहौल बच्चों की चीख़ों से बोझिल है और जिसकी फ़िज़ा में हर पल औरतों की सिसकियां गूंजती हैं, जहां के लोग मर–मर के जी रहे हैं और जी–जी कर मर रहे हैं।

आओ! ज़रा उन बूढ़ी आंखों को देखो जो बहते–बहते सूख चुकी हैं, उन कांधो को देखो जो लाशे ढोते–ढोते अपंग हो चुके हैं, उनके जिस्मों को देखो जो भूख के कारण कमज़ोर होकर पिचक चुके हैं, उन क़दमों को देखो जो भागते–बचते शिथिल हो चुके हैं, आओ! उस शहर को देखो जो स्वर्ग से नर्क में परिवर्तित हो चुका है।

धरती के सीने पर सदा ही अज़दहों ने फुंकारे मारी हैं, दरिन्दों ने घर बनाए हैं, मगर अब तक ऐसा सांप और अज़दहा पैदा नहीं हुआ जैसा शाम (सीरिया) की सत्ता पर फुंकार रहा है, और न ही ऐसी दरिन्दगी व हैवानियत आज तक किसी को प्राप्त हुई जैसी इब्ने अल असद (बश्शारुल असद) को प्राप्त है।

निसंदेह आज दुनिया भर की ज़मीनें प्यासी हैं, उसको ख़ून चाहिए, लेकिन किसका, मुसलमानों का, इराक़ की धरती किसके ख़ून से सींची गई है?मुसलमानों के। बर्मा किसके ख़ून से रंगीन है?मुसलमानों के। ग़ज़्ज़ा में किसकी लाशें तड़पती हैं?मुसलमानों की। मिस्र की ज़मीन वाले किसका ख़ून बहाते हैं?मुसलमानों का। हल्ब (एलेप्पो) की ज़मीन भी प्यासी है, ख़ून चाहती है, किसका?बेशक मुसलमानों का! लेकिन क्यों? मुसलमान ही क्यों?

क्योंकि ऐ मुसलमानों! सबसे सस्ता ख़ून तुम्हारा है, सबसे सस्ती जानें तुम्हारी हैं, क्योंकि तुम ग़ाफ़िल हो, तुम पर दुनिया का जादू चल गया है, तुम मन की इच्छा के ग़ुलाम हो चुके हो, तुम गुमराही के कब्ज़े में आ गए हो, तुम्हारा मुसलमान होने का एहसास समाप्त हो गया है, तुम्हारी धार्मिक बंधुत्व मिट चुका है, और तुम भी कैसर व किसरा की तरह दौलत के पुजारी और इस समाप्त हो जाने वाले जीवन के लोभी बन चुके हो, अगर ऐसा न होता तो जो कुछ हो चुका है और जो कुछ हो रहा है वह ऐसा था कि उससे तुम्हारा अस्तित्व कांप उठता, तुम्हारी चीखों से दुनिया दहल जाती, लेकिन आह! तुम्हारी ग़फ़लत से बढ़कर आजतक दुनिया में कोई अचम्भे की बात न हुई, तुम्हारी नींद की संगीनी के आगे पत्थरों के भी दिल छूट गए लेकिन आह! तुम न जगे। तुम ऐसे तो न थे! तुम्हारे पूर्वज तो ऐसे न थे?!

ऐ मुसलमानों यक़ीन मानो! आज हल्ब (एलेप्पो) कंपन कर रहा है, कौन है जो उसके थामे? हल्ब (एलेप्पो) बेचैन है, कौन है जो इसको सुकून दे? हल्ब (एलेप्पो) फ़रियादी है, कौन है जो इसकी फ़रियाद सुने? हल्ब (एलेप्पो) जल रहा है, कौन है जो उसकी आग बुझाए? हां! हल्ब (एलेप्पो) मिट रहा है, कौन है जो इसको संभाले?

क्या तुममें कोई नेक इन्सान नहीं है!!

तौबा व इस्तिग़फ़ार

अपने लिये इस्तिग़फ़ार

हर मुसलमान मर्द—औरत के लिए ज़रूरी है कि उससे कोई ग़लती हुई हो या न हुई हो, हर हालत में तौबा व इस्तिग़फ़ार करता रहे। क़ुरआन करीम में ऐसे लोगों के लिए बड़ी बशारत (ख़ुशख़बरी) आयी है जो दिन—रात इस्तिग़फ़ार करते हैं। ख़ास करके वे लोग जो रात के अंधेरे में जब सारी दुनिया सो रही हो, रात के ख़ात्मे पर अपने मालिक (ख़ुदा) के सामने सजदा करते हों, उनकी आंखें नम और दिल दुख से भरा हुआ हो, उनकी ज़बाने माफ़ी व क्षमा के शब्दों से तर हों, और वे ''और वे लोग सुबह—सवेरे इस्तिग़फ़ार करते हैं'' के मिस्दाक़ (उदाहरण) हों।

दूसरी जगह ईमान की शान यह बतायी गयी है:

''और उनके पहलू बिस्तर से अलग रहते हैं, पुकारते हैं अपने रब को ख़ौफ़ और लालच से।''

अल्लाह तआला ने अपने बन्दों को हुक्म दिया है:

''ऐ ईमान वालो! अल्लाह की तरफ़ सच्ची तौबा करो।''

दूसरी जगह कहा गया है:

''अपने रब से बख़्शिश चाहो, फिर उसकी तरफ़ तौबा करो।''

आम मुसलमानों के लिए इस्तिग़फ़ार

अपने लिए इस्तिग़फ़ार करना तो अपनी जगह अहम है ही, लेकिन एक मुसलमान की शान यह भी है कि वह अपने भाइयों और बहनों के लिए भी इस्तिग़फ़ार करे और मग़्फ़िरत चाहने के समय दूसरे मुसलमान भाइयों और बहनों को भी याद रखे। ख़ुद रसूलुल्लाह (स०अ०) को अल्लाह तआला का हुक्म है:

''आप अपने लिए मग़्फ़िरत चाहिए और मोमिन मर्द व औरतों के लिए मग़्फ़िरत चाहिए।''

हमारे आक़ा और सरदार रसूलुल्लाह (स०अ०) ने इरशाद फ़रमाया:

''जो बन्दा आम ईमानवालों और ईमानवालियों के लिए अल्लाह तआला से मग़्फ़िरत मांगेगा, उसके लिए हर मोमिन मर्द—औरत के हिसाब से एक—एक नेकी लिखी जाएगी।

हज़रत इब्राहीम (अलै०) भी हमेशा अपनी मग़्फ़िरत मांगने के साथ—साथ वालिदैन (माता—पिता) और सारे मुसलमानों की मग़्फ़िरत मांगते रहते थे, जिसको क़ुरआन मजीद ने इस तरह बयान किया है:

''ऐ हमारे रब हमें बख़्श दे और मेरे वालिदैन को बख़्श दे और सभी ईमानवालों को बख़्श दे क़यामत के दिन।''

रसूलुल्लाह (स०अ०) ने ऐसे मुसलमानों को ख़ैर व बरकत की ख़ुशख़बरी दी है जो स्वार्थ से काम न लें बल्कि सारे मुसलमानों की उनको चिन्ता हो।

हज़रत अबूदरदा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया:

''जो बन्दा आम मुसलमान मर्द व औरत के लिए हर रोज़ २७ बार अल्लाह से माफ़ी व मग़्फ़िरत की दुआ करता हो वह अल्लाह के उन मक़बूल बन्दों में गिना जाएगा जिनकी दुआएं क़ुबूल होती हैं और जिनकी बरकत से दुनिया वालों को रिज़्क़ मिलता है।

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP -19

Issue: 01 | JANUARY 2017 | VOLUME: 09

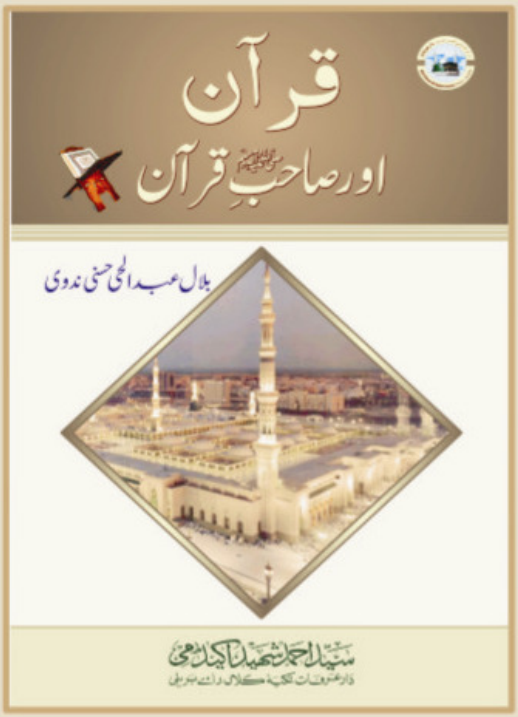

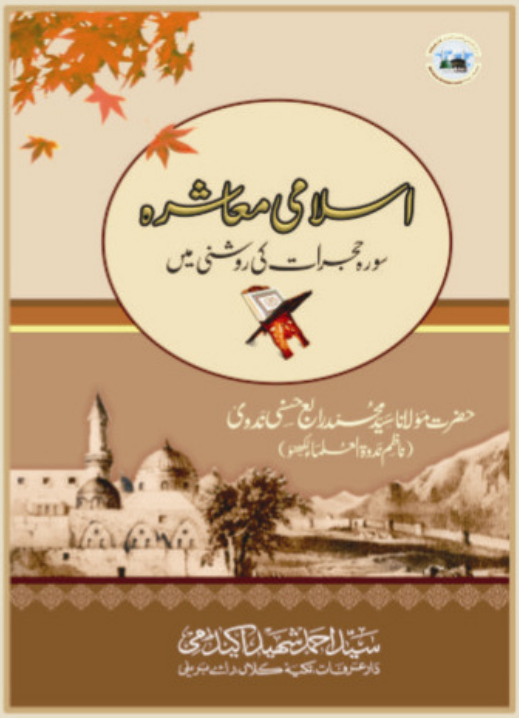

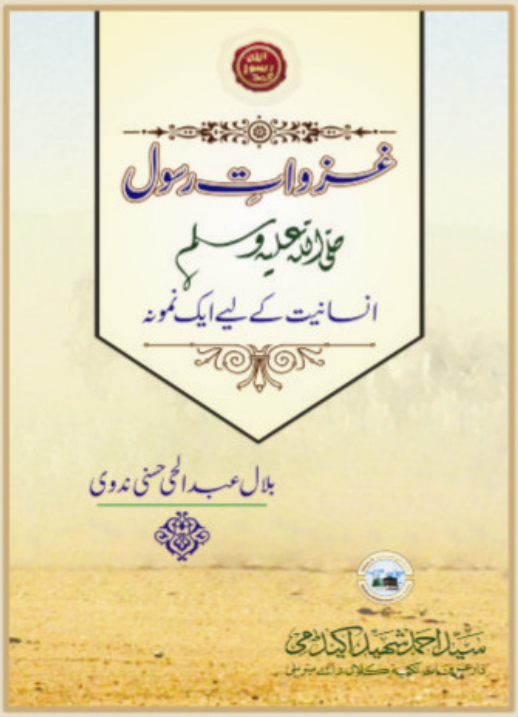

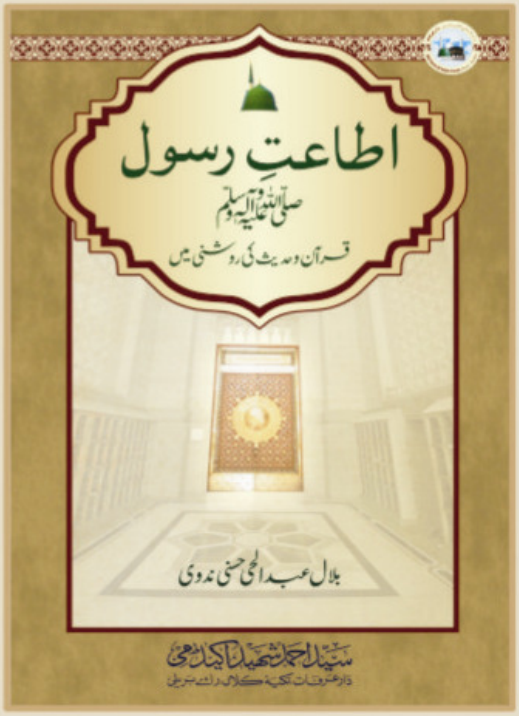

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.